एक ओंकार (ੴ) सतिगुरु प्रसादि ॥

इतिहास गुरू खालसा (पंथ) अठाहरवीं शताब्दी से बीसवीं शताब्दी के मध्य तक

व

स्वन्त्रता का सिक्ख संग्राम

अथवा

सिक्ख इतिहास भाग द्वितीय

www.sikhworld.info
E-mail: info@sikhworld.info
&
jasbirsikhworldinfo@gmail.com

क्रांतिकारी जगद्गुरु नानक चेरीटेबल

द्वितीय – अंश (7)

लेखकः
जसबीर सिंघ
फोनः 0172 – 21696891
मो. 99881 – 60484

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

सिंघ सभा लहर

सिक्ख इतिहास, भाग-दूसरा

लेखक : स. जसबीर सिंघ

क्रांतिकारी गुरु नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़

Website : www.sikhworld.info

विषय–सूची

क्रमसंख्या	शीर्षक	पृष्ठसंख्या
1.	सिंघ सभा लहर	
2.	भाई गुरमुख सिंघ, प्रोफैसर	
3.	सिंघ सभा तथा शिक्षा की लहर	
4.	विकास और परिवर्तन	
5.	अमृतसरी धड़े की टक्टर	
6.	खालसा कालेज कैसे बना	
7.	दीवान लाहौर के अंतिम वर्ष	
8.	सिंघ सभा लहर की देन	
9.	पुनर–जागरण और मूर्ति पूजा निषेध	

अंग्रेजी राज्य : सिख राज्य लुट जाने के पश्चात सिखों पर मुसीबत के पहाड़ टूटने आरंभ हो गए। एक ओर अंग्रेज़ों की कूटनीति अपना काम कर रही थी, अनेक रईस व सरदार तबाह हो चुके थे ओर अनंतः अंग्रेज़ी सरकार से किये गए सहयोग के बदले इनाम व जागीरें लेने में व्यस्त थे। श्री अमृतसर, अकाल तख्त साहिब, तरन तारन आदि प्रसिद्ध गुरद्वारे इस सरकार के प्रबंध में चले गए, और दूसरी ओर समय की सरकार के कर्णधारों का यह विचार था कि यदि किसी देश की धार्मिक, शैक्षणिक प्रणाली व योजना को बिगाड़ दिया जाय तो वह देश को अधिक समय तक गुलाम रख सकती है। हर इसाई बना भारतीय उन के राज्य की जड़ों को गहराई तक ले जाएगा। अतः मिशनरी सोसायटियों व खास कर अमरीकन परैस्बाईटैरीयन को सरकारी कर्मचारियों ने बुला कर, 9 फरवरी 1852 को चर्च मिशनरी एसोसिएशन बनाई और इस का प्रमुख केंद्र अमृतसर को बनाया गया। पादरियों के द्वारा सिखी पर असहनीय वार शुरू हो गए। अनेक मन घड़ंत कहानियां बना कर सिखों को सिखी से पतित किया जा रहा था। पंजाबियों के सतियुगी राज्य को डाकू राज्य कह कर, अनेकों दोष लगा लगा कर, बदनाम किया और खालसा पंथ की शान में उल्टा प्रचार करके, सिखी महल की बुनियाद में मानो बारूद भरा जा रहा था। कुछ चालाकी से, कुछ लालच से और कुछ डर दे कर, सिखों को हर प्रकार से पतित किया जा रहा था। सिखों के राज्य में हलवे मांडे के यार बने हुए सिख तो दिनों में ही राम – राम, तोबा – तोबा व यसूह मसीह के भक्त हो गए। यहां तक कि तीन वर्षो में हो इसाईयों ने 375 गांवों में अपने अड्डे बना कर 27000 श्रद्धालु बना लिए जिन में से दो तिहाई इसाई मत ग्रहरण कर चुके थे और चार हजार के लगभग इस काम के लिए तैयार थे।

सन् 1857 के गद्दर के कारण इस काम की गति रुकी । कुछ लोग गद्दर का बड़ा कारण, भारतियों के धर्मो में अधिक दखल देना समझते थे। पर मिशनरियों ने जल्द ही इन विचारों पर विजय पाने के लिए यह बताया कि ग़द्दर करने वाले वे हैं जिन तक, सरकार पादरियों व मिशनरियों को जाने नहीं देती थी। जिन स्थानों पर इसाई मिशन सफल हुए थे वहां पर ग़द्दर नहीं हुआ था। बल्कि नवोदित – इसाई चाहते थे अंग्रेज़ भारत में रहे ही और उन्होंने ही इस आजादी की लहर को दबाने में अधिक योगदान किया था। इसलिए इनके कामों में से सरकारी अवरोध को हटा कर, इन को बल्कि हर तरह की हल्ला शेरी दी गई। दिसंबर 1862 को पंजाब मिशनरी कान्फेंस हुई और लोगों को प्रेम – प्यार, सेवा, स्कूल और अधिक पैसों, नौकरियां व अन्य बेशुमार रियायतें दे कर मिशनरियों ने अपना काम और तेज कर दिया। इस राज्यसी रियायतें दे कर मिशनरियों ने अपना काम और तेज कर दिया। इस राज्यसी अंधेरी से सिखी के बाग पर मानो बसंत में ही पतझड़ आ गई हो। सिखों की बढ़ रही संख्या कम होने लगी। खास करके 1862 से 1881 में जब इन्हें इसाई बनाने का पूरा जोर लगाया गया, तब तो इनकी संख्या बहुत ही कम हो गई।

हिंदुस्तान में, सिख राज्य के समय सिखों की जो संख्या थी वह एक करोड़ के लगभग थी जो

1881 में 1853 528 ही रह गई।

फिर कुछ जागृति आई तो

1891 में	190783 3
1901 में	21953 3 9
1911 में	3 014466
1921 में	3 23 8803
1931 में	43 3 5771 हो गई।

और तो और, सिखी के गढ़ जिला श्री अमृतसर में ही सिख, जो 1868 में 23 2224 थे, 1881 में 21613 6 रह गए और साथ के जिले स्यालकोट में 50279 से 40195 रह गए। यही दशा दूसरे जिलों में रही।

इधर से घर का भेदी लंका ढाए के कथनानुसार, गुरूडंम का प्रचार शुरु हो गया। सोढी व बेदी आदि गुरू अंश कहलाने वाले , गुरू बन बैठे। पाखंडी साधुओं के टोलों ने सिखों को लूट ही नहीं खाया बल्कि ऐसा भटकाया कि सिखों को अपनी वास्तविकता ही भूल गई। गुरद्वारों, डेरों और धर्मशालाओं आदि के भाई, सिखी के सुरक्षा कवच होते हुए, उल्टे खेते को खाने लग गए। देहधारी गुरु ये स्थान – स्थान पर कुकरमुत्ते की तरह पैदा होने लगे। सरदार नाहर सिंघ जी एम. ए. ने अपनी पुस्तक 'साडी दशा (पंजाबी गुरमुखी) के पृष्ठ 44 – 45 पर इस समय के बारे में इस तरह उल्लेख किया है

"सन 1850 से सन् 1880 तक सिख मत में रिलीजीयस पैटरीयज (धार्मिक पिताओं) गाड फादर्स का बहुत भारी जोर चला। बेदियों, सोढियों, भल्लों, गुरु के साहिबजादों, स्थानीय गुरूओं, साधुओं की जमायतों ने सिखपंथ को लूट खाया। यह सब अपने – अपने क्षेत्रों में गुरु बन बैठे। श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के बराबर ही गद्दियां लगा कर बैठते। यह दंभी गुरु, सिखों से, गुरू ग्रंथ साहिब की हजूरी में अपने पैर पूजवाते और पूजा का धान स्वयं ही खा जाते। इस समय गुरसिखों को कोई धार्मिक जत्था या सोसायटी न रही और आपा – धापी की मारधाड़ व पूजा का धान खाने को हर व्यक्ति तैयार हो बैठा। तख्तों, धामों, बुंगों, डेरों को वहां के ही महंत या निजाम अपनी पैतृक संपत्ति समझने लगे। कुरीतियां प्रचलित हो गई और सिख बेचारे अंध कूप में राह ढूंढने के लिए टक्करें मारने लगे।"

बात क्या, गिरते – गिरते सिख यहां तक गिरे कि शक्ल सिखी की और अक्ल से ब्राहमणों के चेले हो कर निकले। सिख धर्म व गुरु वाक्यों को बिल्कुल ही भूल गए। श्री राम चंद्र व श्री कृष्ण जी की कहानियां इनका धर्म, और दीवाली दुशैहरा इन के त्यौहार, देवी देवता इन का इष्ट, अकेला अकेला पाखंडी इन का गुरु व हिंदुओं के पुराण इन सिखों की जान हो गए। श्री गुरु नानक, श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज के अवतार धारण के दिनों का पता नहीं, दीवाली व दुशैहरा को चाहे खुशी के मारे मनाते हुए खर्च से दीवाला ही निकल जाए। यदि कहीं श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को माथा टेकना पड़ता, तो इस तरह जैसे साध और पत्थर के आगे झुकते हैं। गुरु साहिब इन के लिए हिंदू धर्म की खिचड़ी का हिस्सा हो गए और सिख धर्म केवल पुस्तकों में रह गया। सभी स्थानों पर संध्या गायत्री की अरदास और चौबीस अवतारों का ध्यान धर के वाहिगुरु का जाप होने लगा। शादी, ग़मी और दैनिक व्यवहार में ब्राहमणों का पूरा प्रभाव व दखल चलता था, भजन होते थे और कछैहरे की जगह पर धोती पहनाई जाती थी। यह सिखों की तात्कालिक दशा का एक नमूना मात्र है।

जैसे उमस के बाद अंधेरी और वर्षा आती है। वैसे ही सिखों की इस गिरावट व गफलत के बाद खालसाई खून ने किसी – किसी दिल में उबाल खाया। पोठोहार के क्षेत्र में निरंकारी लहर, जो बाबा दयाल जी ने चलाई थी, जोरों पर थी। इन के संस्थापाकों का तात्पर्य केवल गुरमति के नियमों का प्रचार करना था जो बहुत कठिनाइयों व कष्टों को झेल कर भी करते थे। पर शीघ्र ही सिखी – सेवकी होने के कारण, गुरू डम भी आ गया जिस के कारण यह पुनर्जागरण की लहर पोठोहार से बारह न बढ़ सकी।

दूसरी ओर भैणी साहिब, जिला लुधियाना को गढ़ बना कर, बाबा राम सिंघ जी ने सिखों को संगठित करने का प्रयास किया जो आज नामधारी लहर के नाम से प्रसिद्ध है। निरंकारियों की भांति आप भी पश्चिमी लहर के विरोधी थे। अतः इस समय सरकारी नौकनियों, स्कूलों, कचैहरियों, डाकखानों, तार घरों और रेलवे आदि सभी सरकारी प्रतिष्ठानों के बाईकाट का बहुत जोर से प्रचार हुआ। खास करके विदेशी वस्तुओं व कपड़े का प्रयोग बंद कर दिया गया। इसके साथ ही बाबा जी इस लहर के द्वारा अपना निर्वाह करना सिखलाया। गुरबाणी का प्रेम, मिलबांट कर खाने के गुण और नाम का जाप करने का अभ्यास फिर शुरू हुआ। बाल विवाह, शराब व विवाहों पर अनुचित व्यय की समझ आने लगी और यह भी कम होने लगा। यह सब कुछ देख कर समय की सरकार को भय हुआ और सुधारवादी नामधारी लहर को कैरी आंखों से देखा गया। बंदिशें होने के कारण नामधारी जोश कम हुआ और 1868 में सरकार ने बंदिशों को भी हटा लिया। इसका अच्छा असर हुआ और नामधारी लहर पहले से भी अधिक सरगर्म हुई। नामधारी, गौ वध के कट्टड़ विरोधी थे और श्री दरबार साहिब अमृतसर के समीप सरकारी आदेश के विरुद्ध गौवध होने के कारण काफी जोश फैल रहा था। इसी कारण 14, 15 जनवरी 1872 को मलेर कोटला के नामधारी सिखों ने इस रोश के कारण कुछ बूचड़ों को काट कर, उनकी हत्या कर दी। इस से नामधारियों पर जोरदार आफत आ गई । नामधारी घेरे गए, जिन में 49 सिखों को बिना जांच किए या मुकदमा चलाए लुधियाना के डिप्टी कमिशनर मिस्टर कावन के आदेश से तोपों से उड़ा दिया गया बाकी के सिखों का दूसरे दिन कमिशनर मिस्टर फोरस्मिथ ने मुकदमा सुना और बाकियों को फांसी की सजा दी गई। इस तरह बेरहमी से कानून के विरुद्ध काम लिया गया और 150 सिखों को शहीद कर दिया गया। सैंकड़े सिख नज़रबंद व कैद भी किए गए। बाबा राम सिंघ जी को भी जलावतन करके रंगून भेज दिया गया। गुरद्वारा भैणी साहिब के दरवाजे पर पुलिस का पहरा लग गया और सभी नामधारी सिखों की भी जोरदार निगरानी होने लगी जिस के कारण यह लहर धीमी पड़ गई। यह सुधारवादी लहर बाद में जा कर गुरुडंम की दलदल में फंस गई।

नामधारी लहर अंग्रेजों के क्रोद्ध के निशान बन गई

(1811 से 1885 ई.) बाबा राम सिंघ नामधारी जी प्रथम सिक्ख नेता थे जिन्होंने सिक्ख समाज में आई त्रूटियां को मद्देनज़र रखकर सुधार की लहर चलाई तथा अंग्रेजों के विरूद्ध न मिलवर्तन का योजनाबद्ध अंदोलन चलाया । उन्हें ग्रिफतार करके मांडले (बह्मा) भेज दिया गया । जहां उनकी मृत्यु हो गई । वह सदैव अपने को गुरू नानक के घर का तुच्छ सेवक कहते थे।

नामधारी लहर अंग्रेजी सरकार के क्रोध का निशाना बन गई। इसलिए उस स्थान पर सिखों की धार्मिक अगवाई

के लिए श्री गुरू सिंघ सभा लहर ने जन्म लिया। इस नई लहर के आरंभ होने के मुख्य कारण इसाईयों के वे मौलिक आंदोलन थे जो उन्होंने पंजाब को इसाई बनाने के लिए सन 1845 – 46 से ही शुरु कर रखे थे। इस के बाद सन् 1849 से 1857 तक उनके इस प्रचार ने और भी जोर पकड़ा और पंजाब के अनेकों सपूत, कई प्रकार के डर अथवा लालच दे कर इसाई बनाए गए। इनमें से पाठकों के सामने शेरे पंजाब महाराजा रणजीत सिंघ जी के सपुत्र महाराजा दलीप सिंघ की मिसाल रखी जा सकती है।

महाराजा दलीप सिंह ने अपने भत्ते में से इसाई धर्म संस्थाओं और मिशन स्कूलों के प्रबंध हेतु खुले दिल से दान देना शुरू किया। कपूरथला रियासत के सिख राजा ने लुधियाना मिशन को रियासत की राजधानी में अपना एक केंद्र खोलने के लिए निमंत्रित किया और इस केंद्र को चालू रखने के लिए काफी रकम दी।

"महाराजा कपूरथला की ओर से अपनी राजधानी में मिशनरियों को इस प्रकार बुलाए जाने से पहले भारत में किसी भी राजा महाराजा द्वारा इसाई मत के प्रचार को इस तरह प्रोत्साहित करने की और कोई ऐसी मिसाल नहीं मिलती।" (देखें लुधियाणा मिशन की वार्षिक रिपोर्ट 1862, पृ 51)

इसके कुछ वर्ष पश्चात महाराजा कपूरथला का भतीजा कंवर हरनाम सिंघ इसाई बन गया। हरिमंदर साहिब के निकट ही इसाई धर्म का प्रचार होने लगा। इस मंतव्य के लिए दरबार साहिब के पास ही एक बुंगा, विशेष तौर पर किराए पर ले लिया गया।

अंग्रेजी सरकार ने इसाईयत के प्रचार के लिए सरहद्दी लाइन पर, जो कि शिमला से कराची तक जाती है, 6 बड़े स्टेशन अथवा अड्डे कायम किये – कोट गढ़, कांगड़ा, बंनू, डेरा इस्माइन खान, मुल्तान व खान पुर। इस के अतिरिक्त पांच छोटे अड्डे पंजाब के बीच हो अलग बनाए – बटाला, नारोवाल, कलारकाबाद, तरन तारन व गांव दादन खान। अमृतसर, लाहौर, पेशावर, कश्मीर, डेरा गाजी खान, हैदराबाद, सिंध और कराची के बड़े अड्डे इसके अतिरिक्त थे, जहां से जरूरत पड़ने पर स्थान – स्थान पर प्रचारक भेजे जाते।

अंग्रेजी सरकार ने सरदार दयाल सिंघ मजीठिया को प्रेरित करके अमृतसर में इसाई मिशनरी के काम के लिए एक बाग और मजीठा में एक गिर्जा घर भी खोला। प्रचार के अतिरिक्त शिक्षा के क्षेत्र में भी इसाइयों ने अपने धार्मिक उद्देश्यों के लिए यही चाल जारी रखी। स्थान – स्थान पर कई मिशन स्कूल खोले गए। जैसे सन् 1858 में पंजाब में इसाई मिशनरी स्कूल व सन 1858 से सरकारी स्कूल, कुछ तेजी से ही खुलने लगे। हिंदुओं, मुसलमानों व सिखों के बच्चों को यीसू मसीह के भगत बनाना शुरू किया गया। सिखों के पास अपने स्कूल तो थे ही नहीं, इसलिए उनके बच्चे मिशन स्कूलों में पढ़ने के कारण सिख धर्म से अधिक इसाई मत की जानकारी रखते थे।

सन् 1873 ई० के आरंभ में अमृतसर मिशन स्कूल के चार सिख विद्यार्थियों ने, जिन के नाम आया सिंघ, अत्तर सिंघ, साधू सिंघ और संतोख सिंघ थे, इसाई मत के प्रभाव में इसाई होने की इच्छा प्रकट की। जब सिखों को इस बात का पता चला तो उनहोंने अपने ही घरों में यह ज्वाला भड़कते देखी तो उनके दिल पर भारी चोट लगी। समय पर पता लग जाने के कारण कई सिख मुखियों ने इन विद्यार्थियों को बहुत मुश्किल से समझा बुझा कर इसाई बनने से रोक लिया। अभी इस घटना का घाव सिख हृदयों पर ताजा ही था कि फिल्लौर से एक पंडित श्रद्धा राम फिलौरी ने, जो अंग्रेजी शासन का नमक ख्वार था, अमृतसर आकर गुरू के बाग में कथा करनी आरंभ कर दी। इस कथा के दौरान उस

ने श्री गुरू साहिबान की शान और खालसा पंथ के संबंध में बहुत अयोग्य शब्दों का प्रयोग किया। पंडित जी, सिखों के अपने घर, श्री अमृतसर में, उनकी छाती पर बैठ कर मूंग दलते रहे इस पर भी किसी दिशा से कोई जोरदार विरोध की आवाज पैदा न हो सकी।

जब इस प्रचार का प्रभाव सिख नौजवानों पर होने लगा तो होश आई और कुछ मित्रों के संग मिलकर पंडित जी के नास्तिक प्रस्तावों और गुरमति की निंदा के प्रश्नों के उत्तर देने शुरू किए गए और शास्त्रार्थ के लिए उन्हें ललकारा गया। पंडित जी तो भाग गए। इन सज्जनों के प्रेम, प्रयास और काम से संगत की नींद खुली। आगे के लिए इस प्रकार के खतरे से बचने के लिए कोई सभा, संगठन बनाने की आवश्यकता प्रतीत हुई। अतः संवत नानकशाही 404 संवत 1930 बिक्रमी को सरदार ठाकुर सिंघ जी संधावालिये, कंवर विक्रम सिंघ कपूरथला, बाबा खेम सिंघ जी बेदी आदि मुखी सिखों की हिम्मत से 30 जुलाई सन् 1873 को अमृतसर गुरू के बाग में सिखों का बड़ा भारी दीवान हुआ। इसमें गुरद्वारों के पुजारी सिखों, ज्ञानियों, ग्रंथियों, उदासियों, निर्मले संतों व अन्य सिख समाज की श्रेणियों के सभी व्यक्ति थे। इसी दिन श्री गुरू सिंघ सभा लहर की वास्तविक शुरूआत हुई और श्री अमृतसर में श्री गुरू सिंघ सभा बनाई गई। सरदार ठाकुर सिंघ जी संधावालिया इस सभा के प्रधान, अमृतसर के मशहूर ज्ञानी खानदान के ज्ञानी ज्ञान सिंघ जी सैक्रेटरी बनाए गए और सरदार अमर सिंघ जी सहायक – सेवादार और खजांची, भाई धर्म सिंघ जी मजीठा बुंगे वाले नियुक्त किए गए। इस सभा का मुख्य मंतव्य सिख धर्म और समाज में आ रही कुरीतियों को दूर करके, सिख धर्म की असली मर्यादा को कायम करना था।

मैंबरों के दाखिले के लिए बाकायदा नियम बनाए गए और तख्त साहिब पर व अन्य इतिहासिक गुरद्वारों द्वारा इस सभा की हमदर्दी के लिए हुकमनामे जारी किए गए।

इस प्रकार यह सभा तो चल पड़ी और प्रचार भी होने लगा पर इस के संस्थापकों में से तीन प्रसिद्ध अग्रणी कंवल बिक्रम सिंघ कपूरथला, बाबा खेम सिंघ बेदी और सरदार ठाकुर सिंघ जी संधावालिया, विचारों के पक्ष से एकमत नहीं थे। कंवर साहिब निरोल सुधारवादी थे पर बेदी साहिब सुध ारवादी होने के साथ ही देहधारी गुरुवाद स्थापित करके अपनी पूजा करवाने के अभिलाशी भी थे। सरदार ठाकुर सिंघ जी का स्वभाव इन दोनों से कुछ भिन्न प्रकार का था। वे कई बार वही पुराना सिखी जोश जगाने पर इतने गर्म हो उठते थे कि अंग्रेज हकूमत का तख्ता पलटने के स्वप्न लेने लग जाते थे। बेशक कुछ अन्य सिख भी उनके विचारों से सहमत थे, पर सिखों की बहुसम्मति उनके इस विचार के विपरीत थी और वे उस समय की नीति के अनुसार सिखों के लिए ऐसी बातों में पड़ना हानिकारक समझते थे। सिख नेताओं के मतभेद के कारण दो वर्ष के बाद ही गुरमति के प्रचार का काम, जो कि बहुत उत्साह से चलाया गया था।, डावांडोल होने लगा और श्री गुरू सिंघ सभा, अमृतसर कुछ समय के लिए धीमी हो गई।

भाई गुरमुख सिंघ, प्रोफैसर

भले ही सारे काम अकालपुरख, परमपिता परमात्मा ही करता है पर हर काम के लिए कोई ढंग या तरीका वह स्वंय ही घड़ देता है। सिख कौम जब काफी भटक चुकी थी तो सतिगुरु जी ने भाई गुरमुख सिंघ जी पर अपार कृपा की और आपको मलाह बना कर सिख कौम की बेड़ी को अपने धार्मिक आचरण से मंझधार में से बचाने के लिए श्री गुरू सिंघ सभा द्वारा चलाई गई लहर का चप्पू लगा कर केवल मिटने से ही नहीं बचाया बल्कि इस अस्तित्व की सच्चाई प्रकट कर के फिर दूसरी कौमों के मुकाबले पर खड़ा होने के लिए तैयार कर दिया। भाई गुरमुख सिंघ जी का जीवन ही श्री गुरू सिंघ सभा लहर का आरंभिक

इतिहास है। वर्तमान गुरमत की उन्नत अवस्था, पंजाबी की प्रगति व विद्या का विकास होने का सेहरा, आप के सिर पर बंधता है पर सिख कौम में सेवकों की मेहनत को भुला देने की वादी ने इस सेवक का नाम तक भी भुला दिया है।

जन्म : भाई साहिब का जन्म अप्रैल सन 1849 ई. में गरीब माता – पिता के घर कपूरथाला में हुआ था। पिता का नाम भाई बसावा सिंघ था जो राजा निहाल सिंघ जी कपूरथला के लांगरी थे। आप जाति के चंधड़ जाट, गांव चंधड़ जिला गुजरांवाला के निवासी थे। भाई बसावा सिंघ जी पहले पहल रोजगार के कारण महाराजा शेर सिंघ के लांगरियों में भर्ती हो गए।

पूर्व जीवन वृतांत: गांव की जमीन कम थी, इसलिए भाई बसावा सिंघ जी पहले – पहल रोजगार हेतु महाराजा शेर सिंघ के लांगरियों में भर्ती हो गए। उस समय लाहौर में बहुत अनुभवी खानसामे मौजुद थे जिन के अधीन बसावा सिंघ ने बहुत परिश्रम से शाही खाने बनवाने का अनुभव प्राप्त किया था। बाद में 15 सिंतबर सन् 1843 ई को जब महाराजा शेर सिंघ का संधावालियों सरदारों के हाथों कत्ल हुआ तो कमांडैंट गंडा। सिंघ की सहायता से, जो उस महाराजा के रसोईखाने का अफसर था। बसावा सिंघ की जान पहचान राजा निहाल सिंघ के साथ हो गई व आप इस विधि द्वारा कपूरथला पहुंच गए। सन 1852 में राजा निहाल सिंघ का देहांत होने से पहले बसावा सिंघ जी राजा रणधीर सिंघ के पास फिर कंवर बिक्रम सिंघ की सेवा में बदल गए।

शिक्षा प्राप्ति और गुरमत का उत्साह : कंवल बिक्रम सिंघ जी बहुत विद्वान, कवि और नाम बाणी के रसिया थे और भाई बसावा सिंघ के साथ उन का खास तौर पर स्नेह था। इसलिए उन के पुत्र गुरमुख सिंघ को उन्होंने बचपन से ही पाला पोसा, पढ़ाया और पंथक सेवा के योग्य बनाया। भाई गुरमुख सिंघ ने प्रारंभिक विद्या कपूरथला में ही प्राप्त की और फिर विशेष शिक्षा के लिए गवर्नमैंट कालेज, लाहौर जा कर दाखिल हुए। जिन दिनों में अमृतसर सिंघ सभा कायम हुई, भाई साहिब अभी कालेज में ही पढ़ा करते थे कि कंवल साहिब के साथ सभा के सम्मिलिनों में आना जाना होने के कारण आपको गुरमत के प्रचार की लगन लग गई जिसके कारण आपने अपनी बी. ए. को पढ़ाई को बीच में छोड़ दिया और इस सेवा कार्य में जुट गए।

मानसिक झुकाव : भाई गुरमुख सिंघ के निजी कागजात देखने से पता चलता है कि शुरू में उनको चित्रकला का बहुत शौक था। सन् 1873 में जब वे अभी पढ़ते ही थे तो शिक्षा विभाग के कायम मुकाम डायरैक्टर मिस्टर सी परसन का उन्होंने ऐसा सुंदर चित्र बनाया कि जिस को देख कर वह अंग्रेज बहुत ही खुश हुआ। उसने भाई गुरमुख सिंघ को इंजीनियरी की पढ़ाई के लिए रुड़की भेजना स्वीकार कर लिया पर भाई साहिब को कुछ और ही स्वीकार था। इसलिए रुड़की न गए। इस प्रकार एक बार उनको कंवर बिक्रम सिंघ की ओर से कानून पढ़ने की प्रेरणा भी दी गई पर वह इस ओर से भी पीठ दिखा गए। सांसारिक कामों की ओर से इस तरह उपरामता होने का कारण भाई साहिब की धार्मिक रुचियां थीं जो उनको बाबा जस्सा सिंघ आहलूवालिया के जीवन इतिहास में से प्राप्त हुई थीं।

व्यवहारिक कार्यक्रम : सन् 1876 ई० में भाई गुरमुख सिंघ ने यह देख कर कि श्री गुरू सिंघ सभा अमृतसर के प्रचार का काम पीछे पड़ रहा है और पड़ोसी लोग सिखों के मुकाबले पर काफी आगे बढ़ गए हैं, पंथक उन्नति के लिए कुछ सार्थक व रचनात्मक कार्यक्रम बनाया और कंवर बिक्रम सिंघ जी के पास अपने इस आशय की घोषणा कर दी। इस ऐलान के अनुसार भाई साहिब के ये आदर्श विचार थे:

(1) पंजाबी बोली में कौमी साहित्य की रचना करना

(2) सिखों को धार्मिक और व्यवहारिक विद्या देने का प्रयत्न करना

(3) पराधर्मों या मनमत में घालमेल हो रहे सिखों को इस ओर से रोक कर पक्के सिख बनाना, और

(4) समय की अंग्रेजी हकूमत का बिना विरोध किए सिख धर्म के प्रचार की जड़ों को पाताल में ले जाने का संकल्प लेना।

भाई साहिब के ये विचार उस समय की नीति के बिल्कुल अनुकूल थे क्योंकि इन बातों को अनदेखा करके चलने से सिखों को हानि ही हानि थी और लाभ कोई नहीं था। कंवर साहिब ने उन के इस कार्यक्रम को सिरे चढ़ाने के लिए हर तरह, तन– मन व धन से सहायता करने का विश्वास दिलवाया।

प्रथम प्रयासः अब भाई गुरमुख सिंघ का पहला काम श्री गुरू सिंघ सभा अमृतसर को पुनर्जीवित करना था। इस काम को शुरू करने के लिए वे भाई कर्म सिंघ पुजारी को साथ ले कर सरदार ठाकुर सिंघ संधावालिए को मिले। सिंघ सभा की उन्नति के साथ ही बहुता बल उन्होंने इस बात पर दिया कि अमृतसर में सिख लड़कों के लिए मिशन स्कूल के समानांतर एक अलग मदरसा बनाया जाए। दूसरे यह भी कहा कि अंजुमन, पंजाब की हर मुमकिन तरीके से सहायता की जाए, जो इस समय पंजाब युनिवर्सिटी की शक्ल में बदल रही थी। यह सहायता पंजाबी बोली को उन्नत करने के लिए थी। डाक्टर लायटनर, जो अंजुमनि पंजाब का अग्रणी था, इस समय भाई गुरमुख सिंघ का मित्र बन गया। तीसरे, इस काम में उनके साथ भाई आया सिंघ जी जुड़ गए। ऊपर से सरदार ठाकुर सिंघ संधावालिये ने सहायता का विश्वास दिलाया। सन् 1876 में पंजाब युनिवर्सिटी ओरीएंटल कालेज खुला और इस से अगले साल सन् 1877 में इन तीनों सज्जनों के प्रयत्न से ओरीऐंटल कालेज में पंजाबी भाषा पढ़ाए जाने की स्वीकृति मिल गई।

कालेज की नौकरी : पंजाबी को मान्यता प्राप्त होते ही भाई गुरमुख सिंघ पंजाब यूनिवर्सिटी ओरीएंटल कालेज में प्रोफैसर लग गए। इस नौकरी में रह कर वे सन् 1885 तब बी. ओ. एल. व एम. ओ. एल. के विद्यार्थियों को हिसाब, इतिहास व फिलासफी की पढ़ाई करवाते रहे। इस समय के बीच सन् 1881 में प्राईवेट तौर पर उन्होंने हिसाब के आनर्स स्टेंडर्ड की फाइनल परीक्षा पास कर ली।

सन् 1885 से भाई गुरमुख सिंघ की बदली गवर्नमैंट कालेज में हो गई जहां पर आप जूनियर कक्षाओं को हिसाब व इतिहास पढ़ाते रहे। उस समय विद्या का इतना प्रचार न होने के कारण पंजाबी का कोई और अध्यापक मिलना बहुत कठिन था। अतः सन 1888 में फिर ओरिएंटल कालेज में आपकी बदली कर दी गई। पंजाबी कक्षाओं में उस समय आज कल की तरह किस्से कहानियां नहीं, बल्कि वेदांत आदि विषयों के बड़े गूढ़ ग्रंथ पढ़ने होते थे और श्री गुरू साहिब के अर्थों से विद्यार्थियों का अवगत होना जरूरी था। इसलिए ओरीएंटल कालेज में रोज बाकायदा श्री गुरू ग्रंथ साहिब का प्रकाश होता था और गुरमति फिलासफी पर लैक्चर दिए जाते थे।

पुस्तक रचना : श्री गुरू ग्रंथ साहिब में कई हिंदुस्तानी भाषाओं का मेल होने के कारण कई बार विद्यार्थियों को बहुत कठिनाई आती थी। इसलिए भाई गुरमुख सिंघ ने सरदार कान्ह सिंघ नाभा के परामर्श से, जो उन दिनों कुछ समय के लिए लाहौर ठहरे हुए थे, गुरबाणी भावार्थ नामक एक पुस्तक

सरल पंजाबी में लिखी। परंतु यह किसी कारण वश प्रकाशित नहीं हो सकी। इसके अतिरिक्त कई अन्य पुस्तकें भी भाई गुरमुख सिंघ ने लिखीं। इनमें से भारत का इतिहास, गुरमति जंत्री आदि हैं। यह पुस्तक रचना उसी कार्यक्रम का अंग थी जो भाई साहिब ने सन् 1876 में बनाया था।

पंजाबी पत्रकारिता : इसके अतिरिक्त भाई गुरमुख सिंघ ने पंजाबी पत्रकारिता में भी पहल की और गुरमुखी अखबार (1880), विद्याक पंजाब (1880), रसाला सुधारक (1886) और खालसा गजट (1886) प्रकाशित करने आरंभ किए। इनके अतिरिक्त पांचवां एक और पत्र खालसा अखबार, सन् 1885 में सिंघ सभा लाहौर द्वारा निकाला गया। ये पांचों पत्र पंजाबी बोली और साहित्य के प्रसार के लिए भाई साहिब के मौलिक प्रयत्नों के परिणाम थे।

पाठको की संख्या कम होने के कारण, उस समय पत्रों की प्रकाशन संख्या बहुत कम थी। पंजाब के राज्य प्रबंध की रिपोर्ट (1882) के अनुसार रोजाना अखबार आम 1800, आफताबि पंजाब 500, पंजाबी अखबार 250, गुरमुखी अखबार 250 व रसाला अंजमनि पंजाब 425 की संख्या में छपता था।

गृहस्थी जीवन : सन् 1880 से 1888 के बीच के समय में भाई गुरमुख सिंघ की दो शादियां हुई। पहली शादी सिंघ सभा के नियमों के अनुसार जात पात के विचार को एक ओर रख कर, गाँव दोद पुर में बढ़ई सिंघों के घर हुई। बाद में थोड़े समय में ही अचानक उस पत्नी का स्वर्गवास होने पर दूसरी शादी अपने गांव जंडू के मुतसिल माईसरखाना (बठिंडा के समीप) में की।

सिंघ सभा तथा शिक्षा की लहर

सिंघ सभा की जागृति : ओरीएंटल कालेज (लाहौर) के द्वारा पंजाबी प्रचार के प्रारंभ करने के साथ ही भाई गुरमुख सिंघ का दूसरा बड़ा काम, श्री गुरू सिंघ सभा अमृतसर को फिर से शुरू करना था। अतः इस काम के लिए उन्होंने दो पुराने अग्रणियों को आपस में मिलवाया। एक सरदार ठाकुर सिंघ संधावालिया व दूसरे कंवर बिक्रम सिंघ जी को। इन के आपसी सहयोग से फिर वही पंथक सम्मिलन होने शुरू हो गए और इस प्रकार श्री गुरु सिंघा सभा अमृतसर में नई जागृति आ गई।

लाहौर में नई सिंघ सभाः श्री गुरू सिंघ सभा का दफ्तर क्योंकि अमृतसर था, पर गुरसिखी के प्रचार की अधिकांश आवश्यकता इस समय लाहौर में थी, इसलिए सन् 1878 में लाहौर के लोगों के लिए एक नई सिंघ सभा बनाने की आवश्यकता प्रतीत हुई। इस योजना को सफल बनाने के लिए भाई हरसा सिंघ तरन तारन वालों ने, जो पहले श्री दरबार साहिब तरन तारन के ग्रंथी थे और बाद में पंजाब युनिवर्सिटी ओरियंटल कालेज में पंजाबी के सहायक अध्यापक लग गए थे, बहुत गर्मजोशी से हिस्सा लिया। भाई गुरमुख सिंघ जी इस काम में अग्रणी थे। 12 नवंबर सन् 1879 ई० को लाहौर के कुछ चुनींदा सिखों को एकत्र करके एक सम्मिलन गुरद्वारा जन्म स्थान श्री गुरू रामदास जी के मुकाम पर किया। सर्वसम्मति से गुरमता करके श्री गुरू सिंघ सभा लाहौर को स्थापित किया गया।

सरकार के संरक्षण में : इस समय श्री गुरु सिंघ सभा अमृतसर भी सरदार ठाकर सिंघ संध ावालिया की अगवाई में चमक रही थी। अब आवश्यकता इस प्रकार के काम को और पक्के पैरों पर खड़ा करने की थी। सिंघ सभा लाहौर में पहले 26, और बाद में काफी संख्या में और भी सम्मानित सिख शामिल हुए और कई सरकारी व्यक्ति भी, जिन में से राय मूल सिंघ जी प्रमुख थे, इस सभा में सदस्य

लिए गए। यह राय मूल सिंघ जी वही थे जो राजा तेज सिंघ के एजेंट बन कर सन् 1847 – 49 में सिरव राज्य के विरुद्ध अंग्रेजी हकूमत का साथ देते रहे थे और एच.एम. लारेंस से इन्होने इस संबंध में एक प्रशंसा पत्र भी प्राप्त किया था। इस समय यह राय साहिब, लाट साहिब के दरबारी थे। चाहे ऐसे लोगों को सिंघ सभा में शामिल करना गुनाह था पर समय की मांग थी कि सरकार के सहयोग से आगे बढ़ो, नहीं तो हानि ही हानि उठानी पड़ेगी। इसलिए सिंघ सभा के संस्थापकों को इस ओर झुकना ही पड़ा।

इसके पश्चात सिरवों द्वारा आवेदन करने पर पहले सर राबर्ट ईजर्टन लाट साहिब पंजाब और फिर सर चार्लस ऐचीसन श्री गुरू सिंघ सभा के संरक्षक बने। इन के अतिरिक्त कई अन्य चुनींदा अंग्रेज अधिकारियों ने भी सिंघ सभा की शैक्षणिक शारवा की सदस्यता के फार्म भरे।

पंजाबी की पहला पत्रिका : भाई गुरमुरव सिंघ व भाई हरसा सिंघ के मिले जुले प्रयत्नों से सिंघ सभा लाहौर ने बहुत उन्नति की और थोड़े ही समय में इस के सदस्यों की संरव्या 268 तक पहुंच गई। फिर इस प्रचार को स्थाई रूप देने के लिए भाई गुरमुरव सिंघ ने नवंबर सन् 1880 में लाहौर से साप्ताहिक गुरमुरवी अरवबार जो ठेठ पंजाबी में अपनी किस्म का पहला पत्र था, आरंभ किया। इसके मालिक व संपादक वे स्वयं ही थे। यह पत्र देहली पंच प्रैस (लाहौर) में से पत्थर के छापे पर छाप कर प्रकाशित होता था। और इसका वार्षिक चंदा सात रूपए था।

सिंघ सभा लहर : गुरमुरवी अरवबार के द्वारा सिरव धर्म का संदेश, रवास करके पंजाब के प्रत्येक कोने में पहुंचने लग गया। इस कारण लोक रुचि सिंघ सभा के प्रचार की ओर मुड़ी। भाई गुरमुरव सिंघ ने इस समय सारे पंजाब का दौरा किया और स्थान स्थान पर लैक्चर दिए। इसके कारण प्रत्येक शहर या कस्बे में, जहां सिरवों की बहुसंरव्या थी, सिंघ सभाएं बननी शुरू हो गई। ऐसी सिंघ सभाओं में से जो इस समय कायम हुई, गुजरां वाला, वजीराबाद, स्याल कोट, गुरदासपुर, फिरोजपुर, कपूरथला, लुधियाण, अंबाला, मोगा, पटियाला, नाभा, संगरूर आदि स्थानों की सभाएं प्रसिद्ध थीं। ये सभाएं बनते ही साथ के साथ श्री गुरु सिंघ सभा लाहौर के साथ सम्बन्धित होती गई। इस तरह पंजाब में बहुत सी सिंघ सभाएं बनने पर सिंघ सभा लहर शुरू हुई।

सिंघ सभा लाहौर के सम्मिलन इस समय प्रत्येक रविवार को गुरुद्वारा जन्म स्थान श्री गुरु राम दास में हुआ करते थे। आशय और नियम वही थे जो श्री गुरू सिंघ सभा अमृमतसर के थे, पर जब श्री गुरू सिंघ सभा लाहौर कुछ उन्नत हो गई तो प्रचार के उद्देश्य को दृष्टि में रख कर, कुछ विशेष नियम बनाना आवश्यक समझा गया। वे नियम इस प्रकार थे:

सिंघ सभा के नियम:

(1) सिरव धर्म के नियमों को प्रकट करना और स्थान – स्थान पर इस श्रेष्ठ धर्म की चर्चा करना।

(2) जिन पोथियों पुस्तकों में इस धर्म की महानता व भलाई पाई जाती है, उनको छपवा कर प्रस्तुत करना।

(3) संप्रदायी बाणी को रवोज कर प्रस्तुत करना और उनकी तारीरवों व मज़हबी पोथियों को, जैसे जन्म सारवी और गुर प्रणाली आदि, जिन में किसी प्रकार का कुछ संशय है, मूल रूप से विलुप्त कर के उसे शुद्ध करके छापना।

(4) पंजाबी भाषा द्वारा शिक्षा पद्धति की उन्नति व प्रसार करना और इस अभिप्राय से रसाले व अरवबारें निकालना।

(5) जो लोग सिरव धर्म के विरोधी हैं अथवा जिन्होंने इस के विरुद्ध कहा सुनी की है, अथवा जो सिरव लोग तरव्त साहिबान से रवारिज हैं, अथवा जो अपना धर्म छोड़ कर दूसरे धर्म के अनुयाई बन कर उनके समाज में जा मिले हों, अथवा जिन्होंने केशों का अनादर किया हो, अथवा जो सरकार के समीप मुफसद गिने गए हों, अथवा जो सुलह सफाई व भलाई के कार्यो में कौम का विरोध करते हों सिंघ सभा के मैंबर नहीं बन सकते । मगर जब इन में से कोई पिछले किये पर 'तनरवाह' यानी दंड लगवा ले तो भाविष्य के लिए यदि सभा की सहमति हो जाय तो उसे सदस्यता मिल सकती है.....

(6) बड़े पद वाले अंग्रेज बहादुर शैक्षणिक शारवा के सदस्य बन सकते हैं। दूसरे पंथों के लोग भी इस सभा के सदस्य बन सकते हैं जब पक्की तरह मालूम हो जाए कि वे सिरवी धर्म व पंजाबी बोली के शुभ चिंतक हैं।

(7) किसी दूसरे मत के विरुद्ध कहना, सुनना अथवा लिरवना श्री गुरु सिंघ सभा का काम नहीं।

(8) श्री गुरू सिंघ में कोई बात सरकार के बारे में नहीं की जाएगी।

(9) शुभचिंतक कौम, वफादारी सरकारी, सिरव धर्म से प्यार और उन्नति करना शिक्षा का पंजाबी भाषा द्वारा और मसलहत उमदी हर बात में लिहान किया जाएगा।

यह नियमावली सिंघ सभा के अंत तक चलती रही।

सिरव शैक्षणिक आंदोलन की शुरुआतः सिंघ सभा के प्रचार को पक्के पैरों पर रवड़ा करते ही इस के अग्रणियों का ध्यान, जैसा कि पहले ही योजना थी, सिरवों की शैक्षणिक उन्नति की ओर गया। इस समय पंजाब में सिरवों का कोई स्कूल और कालेज नहीं था। हिंदू और मुसलमान इस ओर जोर लगा कर अच्छी सफलता प्राप्त कर चुके थे। भाई गुरमुरव सिंघ ने अपने गुरमुरवी अरवबार में इस संबंध में एक दो अच्छे लेरव लिरवे और बल दिया कि सिरव विद्यार्थियों के लिए स्कूल रवोले जायं और सिरवों का एक कालेज भी बनाया जाए।

पंजाबी स्कूल : ये परामर्श अभी हो रहे थे कि संत सभा लाहौर के प्रधान भाई बिहारी लाल पुरी, जो पंजाबी बोली के बहुत अच्छे लिरवारी थे, सिंघ सभा की शैक्षणिक शारवा के सदस्य बन गए। उनके सहयोग द्वारा अचानक सिंघ सभा तथा संत सभा के आशय एक हो गए, इसलिए लाहौर में एक पंजाबी स्कूल रवोला गया जहां पर बच्चों को पंजाबी भाषा की शिक्षा गुरमुरवी अक्षरों में दी जाने लगी।

पंजाबी कालेज का प्रस्ताव : इसके लगभग डेढ वर्ष पश्चात, फरवरी सन् 1882 में इस दिशा में एक और प्रगतिशील कदम रखने के लिए सिंघ सभा लाहौर के अधीन पंजाबी प्रचारिणी सभा की नींव रखी गई। इस सभा में सोढी हुकम सिंघ, लाला नानक बरव्श, भाई रतन सिंघ, सरदार आया सिंघ, भाई मीहां हुकम सिंघ और भाई गुरमुरव सिंघ मुरव्य सलाहकार थे जिन के द्वारा लाहौर में एक गुरमुरवी अर्थात पंजाबी कालेज रवोलने का प्रस्ताव किया गया । पर थोड़े दिनों में ही राह में कई कठिनाइयां आने के कारण यह सलाह सिरे न चढ़ सकी।

सरदार जवाहर सिंघ व ज्ञानी दित्त सिंघ : इसके पश्चात भाई गुरमुरव सिंघ के प्रयत्न से दो और सज्जन, जिन के नाम सरदार जवाहर सिंघ और ज्ञानी दित्त सिंघ थे, श्री गुरु सिंघ सभा लाहौर में शामिल हुए। ये दोनों सज्जन बहुत अनुभवी व विद्वान थे और पढ़े लिरवे लोगों में अच्छा रसूरव रखते

थे। सरदार जवाहर सिंघ उस समय लाहौर रेलवे में नौकर थे और आर्य समाज के सचिव थे। दूसरे ज्ञानी दित्त सिंघ, जिनका असली नाम उस समय दित्ता राम था, कुछ समय पहले गुलाबदासी संप्रदाय व फिर आर्य समाज के प्रचारक रहे थे।

आर्य समाज से अलग होना : आर्य समाज इस समय क्योंकि सिखों से इतने अलग नहीं हुए थे इसलिए जहां आर्य समाज के जलसे होते थे वहीं प्रबंध आम तौर पर सिखों द्वारा ही होता था। जैसा कि सिंघ सभा के नियमों से प्रकट होता हे, सिखों की हार्दिक इच्छा उनके साथ मिल कर रहने की थी। पर बाद में स्वामी दयानंद के एक पक्षीय व दिल दुःखा देने वाले प्रचार के कारण तंग आ कर सिख उन से एक दम टूटने शुरू हो गए और जल्द ही इतने दूर जा खड़े हुए फिर मिलने की आशा न रही। सरदार जवाहर सिंघ व ज्ञानी दित्त सिंघ के आर्य समाज से विछुड़ने का भी यही बड़ा कारण था। भाई गुरमुख सिंघ ने ज्ञानी दित्त सिंघ को अमृतपान करवा कर बाकायदा सिंघ सजाया। इन दोनों सज्जनों के आ मिलने पर गुरमति प्रचार के मैदान में भाई गुरमुख सिंघ की बाहें और मजबूत हो गई।

पंजाब में शैक्षणिक आंदोलन: पंजाब में इस समय चारों ओर विद्या का प्रचार हो रहा था। अंजुमनि पंजाब, जो सन् 1865 में डाक्टर लाइटनर के प्रयत्न से स्थापित हुई थी, उस के अधिकार में सन 1868 में पंजाब यूनिवर्सिटी कालेज खुला, सन् 1876 में ओरियंटल कालेज बना और फिर सन 1882 में पंजाब यूनिवर्सिटी की स्थापना हुई। इस शैक्षणिक आंदोलन के साथ ही हिंदू भी आगे बढ़े और मुसलमान भी। इन की ओर से अपने–अपने स्कूल कालेज खोले गए और इस लहर को और तेजी से चलाने के लिए संघर्ष शुरु हुआ। अब यह देख कर सिख कैसे पीछे रह सकते थे। इसलिए उन्होंने भी इस दिशा में गर्मजोशी दिखलानी आरंभ की।

सिखों के लिए खालसा कालेज की आवश्यकता: भाई गुरमुख सिंघ ने इस समय सिखों के लिए खालसा कालेज बनाने की आवश्यकता बता कर सिख अग्रणियों को जगाने के लिए श्री गुरू सिंघ सभा लाहौर के प्रमुख पत्र गुरमुखी अखबार में धड़ा धड़ लेख लिखने शुरू कर दिए जैसे कि उन के एक लेख का उदाहरण है – 'जो लोग गांवों में कहते हैं कि वे पढ़ने से डरते हैं और उनके विचार में पढ़ना पढ़ाना इस तरह है जैसे किसी को डेमू से कटवा दिया जाए। शहरों में सिखों के जो लड़के अंग्रेजी फारसी पढ़े हैं, वे भी अपने घर की मर्यादा से हट बैठे हैं, सिखी को बुरा मानते हैं .... अधिकांश इनमें से नाम मात्र के ही सिख हैं और दूसरे समाजों–सभाओं में, सिंघ सभा को छोड़ कर बहुत प्रसन्नता से सम्मिलित होते हैं क्योंकि इनके विचार उन समाजियों से मिल जाते हैं। बाकी रहे दूसरे दुकानदार, काश्तकार, जो न पढ़ना पसंद करते है न ही सिखी को पूरी तरह समझते हैं। यदि ऐसे ही हाल रहा और खालसा कालेज न बना तो किसी दिन शहरों में तो सिखी बिल्कुल दूर हो जाएगी। गांवों में सब सिखी से हट जाएंगें....... खालसा कालेज बनने से सिखों में शिक्षा का प्रचार व प्रसार होगा और धर्म की शिक्षा भी हो जाएगी। यदि यह कालेज न बना, तो सिखों की बहुत हानि होगी।'' (देखें गुरमुखी अखबार 10 मार्च सन 1883 पृ 2, 3) भाई गुरमुख सिंघ ने इन लेखों का सिख हृदयों पर जादू जैसा असर हुआ।

सिख रइसों का झुकाव: कंवर बिक्रम सिंघ जी कपूरथला इस समय सिखों में नई रोशनी के अनुसार शिक्षा का प्रचार करने के लिए सब से बड़े अग्रणी थे। उनकी प्रेरणा से श्री गुरू सिंघ सभा, अमृतसर के अग्रेणी इस दिशा में झुके और बाबा खेम सिंघ बेदी व बाबा सुमेर सिंघ जी महंत पटना साहिब श्री गुरू सिंघ सभा लाहौर इसके सदस्य बन गए। इन्हीं दिनों में भाई गुरमुख सिंघ ने सरदार अतर सिंह

रईस भदोड़ को, जो इससमय सैयद मुहम्मद हसन वजीरि आज़म पटियाला के साथ अनबन होने के कारण अधिकांश लुधियाना ही रहते थे, लाहौर पहुचने के लिए आकर्षित हुए। ये सरदार साहिब संस्कृत के बहुत अच्छे विद्वान और सरकार – दरबार में अच्छा मेल जोल रखते थे। लाहौर पहुंचने पर ये सिंघ सभा के प्रध ान नियुक्त किए गए। इस तरह इन के शामिल होने पर सिख शैक्षणिक आंदोलान को हर दिशा से सहायता मिलने लगी और रास्ते के ऊबड़ खाबड़ साफ होने पर इस को और भी आगे बढ़ने का अवसर मिला।

विकास और परिवर्तन

प्रारंभ: प्रारंभ में श्री गुरू सिंघ सभा अमृतसर व लाहौर दोनों एक थे, पर बाद में ज्यों – ज्यों सिंघ सभा लहर का विकास व फैलाव हुआ त्यों – ज्यों इस के अग्रणियों की एकता में अंतर आता गया और इस लहर के प्रभाव में भिन्न – भिन्न जत्थेबंदियां बन कर कुछ परिवर्तन होना आरंभ हो गया। उस विकास और परिवर्तन की रूप – रेखा संक्षेप में इस प्रकार है।

पुजारी सुधार : सन 1880 में, जैसा कि उस समय की रिपेर्टो से पता चलता है सिंघ सभा लाहौर का एक काम और – पंथक सुधारों के साथ ही गुरद्वारों के पुजारियों का सुधार करना भी था। सारे गुरद्वारे उस समय पुजारियों के हाथों में थे और पंथक मर्यादा को बिगाड़ने के अधिकांश वही जिम्मेवार थे। यह सुधार कैसे आरंभ किया जाय, क्योंकि श्री गुरु सिंघ सभा अमृतसर में अधिकतर पुजारी ही थे, इसलिए भाई गुरमुख सिंघ जी को, जो इस सुधार के प्रणेता थे, बहुत मुश्किल पेश आई। श्री गुरू सिंघ सभा लाहौर के सम्मिलन इस समय गुरद्वारा जन्म स्थान चूना मंडी में होते थे और आते जाते संगत आम तौर पर वहीं पर ठहराती थी। संगत की गहमा – गहमी बढ़ने पर पुजारियों को कुछ शक हुआ और उन्होंने सिंघ सभा के सम्मिलन रोकने के लिए गुरद्वारों के कमरों को ताले लगा दिए। भाई गुरमुख सिंघ ने यह देख कर सिंघ सभा का दफ्तर अन्य स्थान पर बदलने का प्रबंध कर लिया, पर जब पुजारियों ने देखा कि इस तरह तो उन की सारी आय बंद हो जाएगी और सिख गुरद्वारों में मत्था टेकने भी नहीं आएगा। इसलिए वे झुके और अपने आप कमरों के दरवाजे खोल कर उन्होंने भाई साहिब से इस संबंध में लिखती तौर पर क्षमा मांग ली।

बड़ी सिंघ सभा की बुनियाद : इस के पश्चात अप्रैल सन 1880 में श्री गुरु सिंघ सभा अमृतसर द्वारा प्रश्न उठा कि अमृतसर की सिंघ सभा बड़ी है या लाहौर की। बाबा खेम सिंघ बेदी के विचार में अमृतसर की सिंघ सभा बड़ी थी, और भाई गुरमुख सिंघ जी प्रचार के लिहाज से लाहौर की सभा को प्राथमिकता देते थे। अंततः दोनों पक्षों की ओर से अंतिम फैसले के लिए 11 अप्रैल का तारीख निश्चित हुई, जिस में इन दोनों सभाओं की निगरानी के लिए एक महा सभा बनाई। लाहौर से इस सम्मिलन में भाई गुरमुख सिंघ, हरसा सिंघ, गुरतिदत्त सिंघ आदि सज्जन शामिल हुए । सर्वसम्मति से फैसला होने पर दोनों सभाओं में से कुछ मैंबर इस सभा में लिए गए और करार हुआ कि प्रत्येक छिमाही के पश्चात यह सभा उपरोक्त दोनों सभाओं के कार्य की पड़ताल करेगी। और किसी प्रकार का बड़ा परिवर्तन या व्यय महा सभा की स्वीकृति के बिना नहीं किया जाएगा। यह सभा इस प्रकार एक बार बन तो गई, पर फिर न तो इस का कोई सम्मिलन ही हुआ और न ही सिवाय कागजी कारवाई के और कोई अच्छा परिणाम ही निकल पाया।

लाहौर में खालसा प्रैस: अप्रैल सन 1882 में श्री गुरू सिंघ सभा लाहौर की ओर से सिख शैक्षणिक लहर को तेज करने के इरादे से सर चार्लस सचीसन लाट साहिब को शाही दरबार के अवसर पर एक सम्मान पत्र दिया गया जिस का उत्तर बहुत आशा के अनुरूप मिला। इस समयअन्य राजा, महाराजाओं सहित महाराजा हीरा सिंघ जी नाभा भी लाहौर आए हुए थे। भाई गुरमुख सिंघ जी ने पंथक सुधार की कुछ एक कठिनाईयों के बारे में उनके सामने उल्लेख किया जिसके कारण महाराजा ने 7000 रू दिए तथा और भी सहायता करने का वचन दिया। सिंघ सभा के प्रचार के लिए, इस रकम से, इसके अगले साल ही सन 1883 में खालसा प्रैस लगाया गया।

खाससा दीवान अमृतसर: इस के पश्चात सिंघ सभा की महासभा को, जो बाद में सन 1880 में श्री गुरु सिंघ सभा अमृतसर व लाहौर को एकता की कड़ी में पिरोने के लिए कायम की गई थी को नये सिरे से गठित करने की जरूरत पड़ी जनवरी सन 1883 में गुरु सिंघ सभा अमृतसर के पुराने कर्मचारी बदले गए और फिर बसंत पंचमी वाले दिन सम्मिलन होने पर उपरोक्त दोनों सभाओं के मेलजोल से यह बड़ी सभा अपने पैरों पर खड़ा होने योग्य हो गई। इस समय नया रंग रूप दे कर इस सभा का नाम खालसा दीवान (अमृतसर) रखा गया। सिखों का यह सब से पहला दीवान था।

प्रधान और अन्य कर्मचारी : इस खालसा दीवान के पहले प्रधान सरदार मान सिंघ, संरक्षक श्री दरबार साहिब, सचिव गणेशा सिंघ ओर चीफ सैक्रेटरी भाई गुरमुख सिंघ नियुक्त किए गए। बाद में अदला-बदली होने पर प्रधानगी की पदवी सरदार ठाकुर सिंघ संधावालिए को दी गई और सैक्रेटरी भाई नौरंग सिंघ जी नियुक्त हुए। चीफ सैक्रटरी भाई गुरमुख सिंघ ने इस दीवान की नियमावली तैयार की। इस प्रकार इस दीवान द्वारा दोनों पक्षों की एकता भी हो गई और काम भी चल पड़ा। पर यह मिलन बहुत दिन तक निभ नहीं सका। इसके कारण इस प्रकार थे।

आपसी फूट और उसके कारण :

(1) सिंघ सभा लाहौर जितनी प्रगतिशील थी, सिंघ सभा अमृतसर उतनी ही दकियानूसी थी। पहली सभा में कट्टड़ सिखी प्रधान थी और दूसरी सभा में सनातनी मर्यादा।

(2) जनरल सभा, अर्थात खालसा दीवान में भी अधिकांश सदस्य अमृतधारी धड़े के ही थे।

(3) भेदभाव का विशेष कारण यह था कि बाबा खेम सिंघ जी बेदी आदि सज्जन, जो श्री गुरू सिंघ सभा अमृतसर के अग्रणी थे, गुरू अंश होने के कारण अपने आपको गुरू कहलवाते थे और लोगों से अपने पैरों की पूजा करवाते थे।

(4) सिंघ सभा लाहौर के मुकाबले पर अमृतसर की सिंघ सभा में राज्य भक्ति की कमी थी जो उस समय के अनुसार एक दोष माना गया।

(5) सिंघ सभा लाहौर के अग्रणेता भाई गुरमुख सिंघ को अमृतसरी धड़े के लोग नीच जाति (लांगरी का पुत्र) कह कर उनकी निंदा करते थे।

फूट और बढ़ी : यह मन मुटाव पहले तो मन ही मन धुखते रहे, पर बाद में जब 11 अप्रैल सन 1883 को खालसा दीवान का पहला सम्मिलन हुआ तो अपने आप उभरने लगा और नौबत तूं-तूं, मैं-मैं तक आ गई। भाई गुरमुख सिंघ ने एक लंबा सा उपदेश दे कर बहुत समझाया कि यह बेइतकाफी अच्छी नहीं, पर इन बातों का असर तेल पड़े घड़े पर पानी पड़ने की भांति, कुछ भी न हुआ। बाबा

खेम सिंघ जी ने बाकायदा गुरगद्दी लगाई और अमृतसरी धड़े ने इस गद्दी की हिमायत की। इस अनियमितता के बावजूद भी भाई गुरमुख सिंघ ने खाससा दीवान के नियमों का समौदा, जिसे वे अग्रणियों की आज्ञा से बना लाए थे, को पेश किया। इस मसौदे में लिखा था। कि खालसा दीवान का सैक्रेटरी वही व्यक्ति हो सकेगा जो अंग्रेजी पढ़ा लिखा होगा। इस बात से अमृमतसरी धड़े को ईर्ष्या हुई और भाई गुरमुख सिंघ को चीफ सैक्रेटरी पद का भूखा कह कर उनकी निंदा की क्योंकि दीवान के अग्रणियों में उस समय इन जैसा अंग्रेजी पढ़ा हुआ व अनुभवी आदमी कोई नहीं था। दूरदेशी से यही बात सोच कर यह नियमावली रद्द कर दी गई।

खालसा दीवान की नियमावली : कहा जाता है कि उस समय भाई गुरमुख सिंघ ने जोश में आ कर बाबा खेम सिंघ जी बेदी का गद्देला दीवान में से उठा दिया, पर इस बात को मन मानता नहीं। भाई गुरमुख सिंघ जी इस प्रकार जबर्दस्ती गले पड़ने वाले व्यक्ति नहीं थे। उनकी नियमावली को अस्वीकार करने के पश्चात अमृतसरी धड़े ने खालसा दीवान की नियमावली अलग बना ली, जिस में दीवान के इस तरह हिस्से किए गए थे:

(1) सामान्य खंड खालसा दीवान (गरीब सभा)

(2) महान या श्रेष्ठ खंड खालसा (अमीर सभा)

(3) बिबेक सभा

(4) प्रबंधकारी सभा

(5) महान सभा, और

(6) गवर्नमैंट और रियासतों संबंधी सभा।

इसके अतिरिकत दीवान के मुखियों के चुनाव के नियम इस तरह बनाए गये:

(1) प्रैजीडैंड (प्रधान) दरबार साहिब संरक्षक होंगे।

(2) वाईस प्रैजीडैंट (उप प्रधान) अकाल बुंगा के मुखी सिंघों में से होंगे।

(3) चीफ सचिव कोई लायक सिख, जो खानदानी कुलीनशीं लोगों में से ही होगा।

कुछ और आगे चलकर नियम अंक (71) से (73) के अनुसार गुरू अंश का सम्मान समान्य व श्री गुरू साहिब के हजूर गद्देला लगा कर बैठने की पुष्टि लाजमी समझ कर की गई । इसके बिना खालसा दीवान के मातहत सभाओं के नामों की कल्पना इस प्रकार की गई :

(1) श्री गुरू सिंघ सभा

(2) श्री गुरू सिख सिंघ सभा

(3) श्री गुरू सिख सभा: और

(4) श्री गुरू नानक पंथ प्रकाश सभा।

इस नियमावली में एक और भी शर्त थी जिस के अनुसार समान खंड (गरीब) खालसा दीवान की कारवाई को महान अथवा श्रेष्ठ खंड (अमीर) खालसा दीवान रद्द कर सकता था। जिस का मतलब साफ तौर पर यही था कि सारी पंथक शक्ति बाबा खेम सिंघ बेदी के धड़े के हाथों में रहे और अन्य कोई उस के मुकाबले पर उठ न सके। इस तरह समान खंड, महान खंड अथवा गरीबी अमीरी के झगड़े में पड़

कर खालसा दीवान अमृतसर सारे सिखों का साझा न रहा और केवल एक व्यक्तिगत दीवान बन गया।

भाई गुरमुख सिंघ ने इस आपाधापी से तंग आ कर 16 जून सन् 1883 के गुरमुखी अखबार में फूट के शीर्षक से एक लेख छापा जिस के शब्द इस प्रकार हैं: –

"माझा की फूट मशहूर है। फूट का काम जुदा जुदा करने का होता है......... जो लोग अपनी मान प्रतिष्ठा चाहते हैं वे चाहे चील या मुर्गी में भेद न जानते हों, वे बेइतफाकी की जड़ होते हैं अपना सिर उठा–उठा कर बताते हैं कि वे दूसरों के बराबर हो कर नहीं रहना चाहते। ऐसी बेइतिफाकी ने हम लोगों का सत्यानाश किया है।"

तीन धड़े : खालसा दीवान अमृतसर में, जैसा कि इशारे मात्र पहले बताया गया है, लाहौरी धड़े सहित तीन प्रकार के सदस्य थे: (1) गर्म विचारों वाले सरदार ठाकुर सिंघ जी संधावालिया आदि, जो दिल से सरकार अंग्रेजी के साथ सहयोग करने के हक में नहीं थे। (2) नर्म विचारों वाले कंवर बिक्रम सिंघ, भाई गुरमुख सिंघ आदि, जो सरकार के साथ पूरी तरह सहयोग करने के चाहवान थे और (3) बेदी, सोढी बाबे, जिन में से बाबा खेम सिंघ जी बेदी प्रधान थे। ये लोग अपने स्वार्थ के लिए नर्म विचारों वाले भी बन जाते थे और गर्म विचारों वाले भी बन जाते थे सौ साखी पर इन का हार्दिक विश्वास था। सिखों में ये लोग अपनी गुरगद्दियां कामय रखना चाहते थे। अमृतसर के पुजारी इस काम में सहायक थे।

सैद्धांतिक मत भेद: कुछ समय बाद सरदार ठाकुर सिंघ संधावालिया अपना इंगलैंड जाने का कार्यक्रम बन जाने के कारण खालसा दीवान की प्रधानगी छोड़ गए और गर्म धड़े की यह बागडोर बाबा खेम सिंघ की पार्टी के हाथों आई। इस के पश्चात मार्च सन् 1884 में लारेंस हाल (लाहौर) के जलसे में सिखों ने बाबा खेम सिंघ के द्वारा लाट साहिब पंजाब को संबोधिन किया। इस समय बाबा जी से रहा न गया और वे कह बैठे कि मैं सभी सिखों का गुरू हूँ और पंजाब के सारे सिखों द्वारा सरकार के पास वकील बन कर आया हूँ। सिंघ सभा लाहौर के मैंबर यह बात सुन कर कैसे चुप रह सकते थे। उन्होंने उसी समय एलान कर दिया कि बाबा जी का यह कथन झूठ है और सिखों का गुरू श्री गुरू ग्रंथ साहिब के सिवा और कोई गुरू नहीं है। यह सैद्धांतिक झगड़ा था तो जो बहुत मामूली सा, पर बाबा खेम सिंघ पीछे हटने वाले नहीं थे। इसलिए सिंघ सभियों के बीच खलीज की शक्ल अख्तियार करने लग गया।

अमृतसरी धड़े से संबंध विच्छेद : अमृतसर में खालसा दीवान की नियमाली के बारे में क्योंकि झगड़ा छिड़ चुका था और कई प्रकार के भेदभाव बढ़ चुके थे इसलिए अक्तूबर सन 1885 ई० को खालसा दीवान (अमृतसर) के सम्मिलन में, जो खास तौर पर किया गया था, इस लागबाजी ने नई दिशा ले ली। पहले तो बाबा खेम सिंघ के भरे दीवान में श्री गुरू ग्रंथ साहिब के हजूर गद्देला लगा कर बैठने पर विचार छिड़ी और फिर एक उर्दू पुस्तक, जिस का नाम खुर्शीद खालसा था, दीवान में रखी गई। यह पुस्तक बाबा निहाल सिंघ कलसियां (छछरौली) ने लिखी थी और इस में नामधारियों के प्रसिद्ध बाबा राम सिंघ जी को श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का गद्दीनशीं कल्पित किया गया था। सिंघ सभा लाहौर ने इस पुस्तक का विरोध किया और इसके बाईकाट का प्रस्ताव रखा पर बाबा खेम सिंघ बेदी आगे से इस पुस्तक की हिमायत में तन गए जिस के कारण वह प्रस्ताव पास न हो सका। बस, यही इस सम्मिलन के दो बुनियादी झगड़े थे उन्होंने दोनों पक्षों को एक दूसरे से हमेशा के लिए अलग कर दिया।

खालसा दीवान लाहौर : भाई गुरमुख सिंघ और उनके साथियों ने इस में अपनी तोहीन समझी जिस के कारण लाहौर पहुंचते ही श्री गुरू सिंघ सभा के मैंबरों की एक बैठक बुलाई गई। इस में

सर्वसम्मति से पास होने पर 'खालसा दीवान', लाहौर की बुनियाद रखी गई। यह खालसा दीवान अमृतसरी धड़े से बिल्कुल ही स्वतंत्र और अलग था और इसके सारे ही सदस्य पंथक सुधार के मैदान में बहुत प्रगतिशील और पक्के तत्त खालसा थे। इस दीवान के स्थापित होते ही सिखों में शुद्धि का प्रचार शुरू हुआ। अछूत उद्धार व आनंद विवाह की मर्यादा प्रचलित करने पर बल दिया गया और सिख महिलाओं को खंडे का अमृतपान करवाया जाने लगा। रावलपिंडी के निरंकारी प्रचारकों ने, जो आनंद विवाह के पहले से ही पक्षधर थे, इस काम में सिंघ सभा लाहौर को अपना पूरा पूरा सहयोग दिया।

लाहौर दीवान की नियमावली : 'खालसा दीवान', लाहौर की नियमावली में प्रत्येक सिख को, जो इस दीवान या 'सिंघ सभा' की अन्य किसी भी जत्थेबंदी का सदस्य हो, एक समान अधिकार दिया गया। अमृतसर की तरह यहां पर न कोई सामान खंड (गरीब) खालसा दीवान था और न ही कोई महान, श्रेष्ठ या अमीर खंड खालसा दीवान। यहां पर सारे ही गरीब और अमीर एक समान थे। श्रेष्ठ सभा यहां पर भी रखी गई जिस को दूसरे शब्दों में कार्यकारिणी या कमेटी कह सकते हैं। पर इस में भी प्रत्येक सदस्य की शैक्षणिक योग्यता ही उसकी श्रेष्ठता का प्रमाण थी, इस के बिना ओर ऊंच नीच का प्रश्न कोई नहीं था। कुछेक मोटे मोटे नियम इस दीवान के इस प्रकार थे:

(1) खालसा दीवान (लाहौर) खालसा की उस मजलिस का नाम है जिस में हर एक सभा (जो शामिल हो) अपना वकील भेजे–यानी हर एक सभा के वकील जब मिल बैठें, उन की सभा का नाम खालसा दीवान है।

(2) सिंघ सभा अथवा सभा के वकील वे व्यक्ति होते हैं जिन का सिंघ सभा या सभा अपनी तरफ से अपना मुख्तार बना कर खालसा दीवान में परामर्श के लिए भेजे।

(3) फैसला .... कसरत० रा० से (बहु सम्मति से) हो।

(4) चीफ सचिव में नीचे लिखी योग्यताएं हों (क) सिंघ हो (ख) रहित कच्ची न हो (ग) नेक चलन हो (ग) गुरमति और गुर इतिहास का जानकर हो (घ) वर्तमान समय और कमेटियों की जानकारी रखता हो (ड़) 30 वर्ष की आयु से कम न हो और (च) विद्वान हो।

(5) कमेटी के मैंबरों में भी उपरोक्त योग्यताएं हों पर हर सहायक 25 वर्ष की आयु से कम न हो।

(6) कमेटी सहायक ऐसे हों जो किसी न किसी काम को कर सकते हों आदि।

शिक्षा और साहित्यक प्रचार की प्रगति : इस समय के दौरान जब कि सिंघ सभियो की खींचातानी चल रही थी खालसा कालेज बनाने के लिए कई बार सम्मिलन होते रहे और सिख साहित्य के प्रचार का काम भी सिंघ सभा की ओर से ज्यों का त्यों जारी रहा। बाबा खेम सिंघ जी ने अपना एक पत्र, जिस का नाम गुरमति प्रकाशक था, आरंभ किया। सरकार पंजाब के पास निवेदन करने पर पुरातन जन्म साखी विलायत से मंगवा कर छापी और मुफ्त बांटी गई। सरकार की ओर से डा. टरंप द्वारा करवाए गए श्री गरू ग्रंथ साहिब के अनुवाद पर सिखों में विचार छिड़ी ओर उस की अशुद्धियों को देख कर मिस्टर मैकालिफ ने नये सिरे से अनुवाद करने का निर्णय किया।

गुरबाणी कानून : इस समय छापेखाने कायम होने व पंजाबी में हर प्रकार की पुस्तके छपने लग गई थीं। कुछ पुस्तक व्यापारियों के प्रयत्न से गुरबाणी के गुटके व श्री गुरू ग्रंथ सहिब की बीड़ भी प्रकाशित हुई। वे बीड़े व गुटके कुछ अशुद्ध थे और मन मर्जी से केवल व्यापारिक दृष्टिकोण से ही छापे गए थे। इसलिए श्री गुरू सिंघ सभा लाहौर द्वारा गुरबाणी कानून पास करवाने की मुहिम शुरू की गई ताकि

कोई पुस्तक छापने या बेचने वाला गुरबाणी की इस तरह अनादर न कर सके। यदि गुरबाणी या श्री गुरू ग्रंथ साहिब छापे जायं तो उन के छापने का प्रबंध दुकानदारों की बजाए किसी जानी मानी पंथक सभा या सोसायटी के अधीन हो जो अशुद्धियों के लिए हर तरह जिम्मेवार हो। उस के अतिरिक्त और किसी व्यक्ति को इस ओर निजी व्यापार चलाने का बिल्कुल अवसर न दिया जाए। यह प्रस्ताव बहुत अच्छा और समय के अनुकूल था। भाई गुरमुख सिंघ जी अपने साथियों सहित इस संबंध में एक बार लाट साहिब को भी मिले, पर अचानक राह में कई ऐसे अवरोध खड़े हो गए कि वे इस जदो जहिद में कामयाब न हो सके जिस के कारण यह कानून मनोकल्पना का फूल बन कर ही रह गया।

अमृतसरी धड़े की टक्टर

बाबा बिक्रम सिंघ बेदी का स्वतन्त्रता संग्राम के लिए किया गया संघर्ष स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य है।

दीवान लाहौर के प्रारंभिक प्रयास : इस समय सिंघ सभिए दो धड़ों में बट गए – (1) अमृतसरी धड़ा और (2) लाहौरी धड़ा। इन दोनों के ही अलग – अलग दीवान, अमृतसर व लाहौर में मौजूद थे। खालसा दीवान अमृतसर के साथ 8 व लाहौर के साथ 30 सिंघ सभाएं संबद्ध थीं। भाई गुरमुख सिंघ के खालसा दीवान कायम करते ही एक तो खालसा प्रैस का प्रबंध सुधारा और दूसरे लाहौर से एक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन आरंभ किया जिस का नाम खालसा अखबार था। पहले ज्ञानी झंडा सिंघ व फिर ज्ञानी दित्त सिंघ इस पत्र के संपादक नियुक्त हुए। इस के अतिरिक्त खालसा गजट व सुधारक नामक पत्रों का प्रकाशन भी आरंभ किया गया। खालसा गजट मूर्ति पूजा के विरुद्ध आवाज उठाता था और सुधारक गुरुमत फिलासफी कठिनाइयों का हल करने के लिए प्रकाशित किया जाता था। भाई गुरमुख सिंघ की सुधारक आकांक्षा इन तीनों पत्रिकाओं में से एक समान काम कर रही थी।

सोढियों – बेदियों की सिखी – सेवकी : बाबा खेम सिंघ जी बेदी और दो – चार और बावा लोग इस सुधार से नाक – भौं चढ़ाते थे और अपनी सिखी सेवकी के लिहाज से उनके क्षेत्र बंटे हुए थे। ऊने वाले बेदी साहिब जिला लुधियाना से हो कर नाभा, पटियाला तक पहुंचते थे। और उनके साईस गांवों के लोगों को अमृतपान करवाया करते थे। बाबा खेम सिंघ जी की सिखी सेवकी पोठोहार, माझा व फिरोजपुर से निकलकर फरीदकोट तक फैली हुई थी। राजा बिक्रम सिंघ जी फरीदकोट वाले उनके पक्के श्रद्धालु थे और अमृतसरी धड़े के कुछ लोग फरीदकोट नौकर भी थे। जब खालसा दीवान लाहौर बना तो राजा बिक्रम सिंघ जी की हार्दिक इच्छा थी कि वे पंथक सुधार के काम में कुछ योगदान दे, पर आगे से सनातनी सिखों द्वारा मर्यादा टूटने की दुहाई दे कर उनको इस ओर से रोक दिया गया।

महान क्रांतिकारी बाबा विसाखा सिंघ जी।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब का फरीदकोटी टीका : इस समय दरबार फरीदकोट की ओर से श्री गुरू ग्रंथ साहिब का टीका तैयार करवाए जाने का फैसला हुआ। बहुत से विद्वान व गुणी – ज्ञानी इस काम के लिए एकत्र किए गए।

भाई गुरमुख सिंघ व उन के एक दो साथी भी इस बैठक में गए। उन विद्वानों व ज्ञानियों के –जिन में बाबा सुमेर सिंघ महंत पटना साहिब भी थे–सनातनी ढंग के अर्थ सुन कर, भाई गुरमुख सिंघ ने राजा बिक्रम सिंघ को साफ कह दिया कि आप के गुणी ज्ञानी व टीकाकार इतनी समझ नहीं रखते कि श्री गुरू ग्रंथ साहिब के सही सही अर्थ कर पाएं क्योंकि इन में खोज भरपूर विद्या, बुद्धि व गुरमत फिलासफी की छानबीन करने में काफी कमियां हैं इस खरी–खरी आलोचना को सुनकर ज्ञानी बदन सिंघ के तो तन–मन को आग लग गई। उसने बेदी खेम सिंघ जी के पास शिकायत कर दी। राजा बिक्रम सिंघ जी चूंकि बेदी साहिब के अच्छे खासे विश्वासपात्र थे। वे भाई गुरमुख सिंघ को इस शुभ कार्य में अवरोध क बनने वाला सभझ कर, उन पर नाराज हो गए।

महाराजा दलीप सिंघ की वापसी और खालसा दीवान लाहौर के प्रस्ताव : इसके अतिरिक्त दो कारण और थे जिन के कारण इस धड़े बंदी ने और आगे कदम बढ़ाया। सन 1885 में जब अभी खालसा दीवान लाहौर बन ही रहा था। तो शेरे पंजाब महाराजा रणजीत सिंघ के सपुत्र महाराजा दलीप सिंघ ने देश वापिस आने के अफवाह उड़ी। वह इस समय विलायत में थे। सरदार ठाकुर सिंघ संध ावालिए उनके पास वहीं पर जा पहुंचे। महाराजा का आगमन सुन कर, सिख फौजों में स्वागत का जोश जागा। इस से सरकार अंग्रेजी को बहुत चिंता हुई। महाराजा साहिब तो राह में से ही वापिस मोड़ दिए गए। पंजाब के सिखों को नियंत्रित करने के लिए सरकार और भी अधिक सावधान हो गई। खालसा दीवान लाहौर द्वारा इस समय राजभक्ति के मद में तीन प्रस्ताव पास किए गए, जो महाराजा दलीप सिंघ के विरुद्ध व अंग्रेज सरकार के पक्ष में थे। ये प्रस्ताव सिखों के उस समय के परतंत्र राजनीतिक झुकाव के प्रतीक हैं।

पुस्तक खुर्शीद खालसा का प्रश्न : एक ओर तो यह प्रस्ताव पास किए गए दूसरी ओर फिर वही बदले की भावना से खालसा दीवान लाहौर ने खुर्शीद खालसा नामक पुस्तक का प्रश्न सामने रखा। उस के लेखक बावा निहाल सिंघ को यह प्रकट करके कि उसने इस पुस्तक में दस पातशाहियों के बाद गुरमति के विरुद्ध देहधारी गुरुओं का पक्ष लेकर बाबा राम सिंघ नामधारी को 12वां गुरू माना है और महाराजा दलीप सिंघ के पंजाब का बादशाह बनने की पुष्टि की है। अतः उन्हें खालसा पंथ में से छेक दिया गया, यानी निष्कासित कर दिया गया। बावा निहाल सिंघ के साथ ही उस का भाई बावा सरमुख सिंघ भी 'तनखाहिया' करार कर दिया गया।

बावा निहाल सिंघ की माफी : खालसा दीवान अमृतसर ने खुर्शीद खालसा के लेखक की चूंकि एलानीया मदद की थी और महाराजा दलीप सिंघ के बारे में एजीटेशन में भी कुछ भाग लिया था, इसलिए उस के कर्मचारियों पर सरकार की कुछ अजनबी निगाह होना एक स्वाभाविक बात थी। पर बाबा खेम सिंघ जी बेदी बहुत बुद्धिमान और दूरदर्शी थे। उन्होंने दीवान का सम्मिलन बुलाया । जिस में बावा निहाल सिंघ को तनखाहिया करार दे कर सरकार अंग्रेजी से इस संबंध में क्षमा मांगने को मजबूर कर दिया। यह राजनीतिक बुद्धिमता थी जो बाबा खेम सिंध ने दूसरे धड़े पर नियंत्रण पाने के लिए एक मौके पर प्रयोग किया।

दीवान की बदलती दशा और भाई गुरमुख सिंघ पर दोष : इसके पश्चात भाई गुरमुख सिंघ के विरुद्ध मौके की ताक होने लगी ताकि उस से इस के विरोध का, जो धीरे धीरे मसीह की आग की भांति दोनों पक्षों के बीच भड़क रहा था, बदला लिया जाए। अचानक इस के दो साल बाद (सन 1887

में) सरदार ठाकुर सिंघ संधावालिए जो विलायत से मुड़ कर पांडेचेरी पहुंच चुके थे, का निधन हो गया। इधर सिंघ सभा के बड़े मुखी कंवर बिक्रम सिंघ कपूरथला का स्वर्गवास हो गया। इसके अतिरिक्त सिंघ सभा लाहौर के मुखिया में कुछ फूट भी पड़ गई। इस तरह अपना पक्ष कमजोर होने पर भाई गुरमुख सिंघ अकेले ही इस मैदान में रह गए । अमृतसरी धड़े ने यह समय ठीक पाया और भाई गुरमुख सिंघ के विरुद्ध एक इश्तिहार छाप कर बांटा गया। इस में उन पर ये दोष लगाए गए:

(1) भाई साहिब गुरू – अंश (साहिबजादों) का सम्मान नहीं करते ।

(2) जन्म साखी (भाई बाला वाला) में सुमेर पर्वत को झूठी कल्पना मानते हैं

(3) बचित्र नाटक को गुरबाणी नहीं मानते ।

(4) 26,27 फरवरी 1887 को सिंघ सभा लाहौर के जलसे में 24 अवतारों की तस्वीरें लगा कर उनका खंडन क्यों किया गया?

(5) एक हिंदू से मुसलमान बने व्यक्ति को, दीवान द्वारा सिंघ सजाया गया।

(6) भाई साहिब ने खालसा अखबार के एक अंक में लिखा कि गुरद्वारों में शस्त्र पूजा का रिवाज हिंदुओं की देखा देखी शुरू हुआ है जो गुरमति के विरुद्ध है।

(7) जब तक कोई सिंघ ताबिया न बैठा हो, तब तक वे श्री गुरू ग्रंथ साहिब को गुरू नहीं मानते।

फरीदकोट में सम्मिलन : सब से पहले इन दोषों पर विचार करने की प्रेरणा श्री गुरू सिंघ सभा फरीदकोट को हुई इस अवसर पर ज्ञानी बचन सिंघ (फरीदकोटी) बाबा खेम सिंघ बेदी, बावा निहाल सिंघ लेखक खुर्शीद खलसा व उन के भाई बावा सरमुख सिंघ ने बहुत सरगर्मी से इस काम में हिस्सा लिया। एक विशेष सम्मिलन फरीदकोट में किया। इस में शामिल होने के लिए लाहौर और अमृतसर की सभाओं को भी निमंत्रण भेजे गए लाहौर से तो कोई न गया, अमृतसर के सभी मुखी अपने आप फरीद कोट पहुंच गए। जब एकत्रता हुई तो फैसला किया गया कि भाई गुरमुख सिंघ जितना समय अपने पूर्व दर्शाए गुनाह क्षमा न करवाए उतना समय तक उसको खालसा पंथ से अलग निष्कासित समक्षा जाए। इस निर्णय पर राजा साहिब फरीद कोट से लेकर छोटे बड़े सभी संतों– महंतों आदि ने हस्ताक्षर कर दिए और बाद में इसे महा सभा की स्वीकृति के लिए अमृतसर भेजी गई।

भाई गुरमुख सिंघ को अकाल तख्त से छेका (निकाला) जाना : महा सभा, अर्थात खालसा दीवान, अमृतसर में भी सब एक धड़े के ही आदमी थे, इसलिए बहुसम्मति से फरीद कोट का फैसला ही शब्दश: सही रखा गया। नीचे लिखे सज्जनों ने इस प्रस्ताव को मजूंर कर के इस पर हस्ताक्षर किए: –

सरदार कान्ह सिंघ मरजीठिया, भाई ईशर सिंघ महंत मलवई बुंगा, भाई हरनाम सिंघ, ग्रंथी दरबार साहिब, भाई झंडा सिंघ ज्ञानी, भाई गुरमुख सिंघ पिशोरिए, भाई हरनाम सिंघ सोदागर चोब, भाई सज्जन सिंघ सोदागर चोब, भाई जस्सा सिंघ रागी दरबार साहिब, भाई गुलाब सिंघ शहीद बुंगिए भाई सरदूल सिंघ ज्ञानी, डाक्टर चरन सिंघ जी, भाई गणेशा सिंघ जी चीफ सचिव और संत निहाल सिंघ जी।

भाई भगत सिंघ और हीरा सिंघ ग्रंथी दरबार साहिब इन में शामिल न हुए । उन्होंने इस प्रस्ताव पर यह कह कर हस्ताक्षर करने से मना कर दिया कि यह गुरमति के उल्ट है और इसके साथ पंथ को हानि होगी।

बाद में यह सारी कारवाई श्री अकाल तख्त पर पेश हुई और भाई गुरमुख सिंघ के विरुद्ध नीचे अंकित हुकमनामा जारी करवाया गया:

ओंकार सतिगुर प्रसादि

श्री अकाल सहाए अकाल सहाए

तख्त अकाल बुंगा श्री दरबार साहिब

साहिब जी

अकाल तख्त का हुकमनामा : हम जुमले सिंघान, पुजारीआन तख्त श्री अकाल बुंगा जी साहिब व श्री दरबार साहिब व बाबा अटल राय साहिब जी व झंडा बुंगा साहिब व शहीद बुंगा साहिब जी के मुलाहजे कारवाई गुरमुख सिंघ सकत्रि का कीआ, मालूम हुआ कि इस शख्स ने चंद जगा बरखिलाफ गुर इष्ट के तोहीन श्री गुरू ग्रंथ साहिब व गुर अंश व गुर बानी के तहरीर व तकरीत कीआ है जिस से साबत होता है कि उसका इतकाद सिखी धर्म से बिल्कुल बरखिलाफ है। इस वास्ते हम तमात पुजारीआन व गरंथीआन व नंबरदाराने श्री गुरद्वारे हाए ममदूत तहरीर करते हैं कि गुरमुख सिंघ मजकूर पंथ खालसा से अलहिदा कीआ गया है, गुरद्वारे हाए मौसूफ में उस की अरदास ना होगी व बरताउ न होगा। तमाम सिंघान को वाज़िआ रहे कि कोई शख्स उस का पैरोकार न हो। जो शख्स उसकी पैरवी करेगा, वह भी बेमुख और लायक तनखाह पंथ के समझा जावेगा और वैसा ही सलूक उस के साथ भी कीआ जावेगा। वकत । बतारीख सतवीं, माह चेत, संमत 418 गुरू नानक शाही मुताबिक 18 मार्च 1887 ईसवी।

दस्तखत हाज़रीन सिंघान ओहदेदारान व गंरथीआन व पुजारीआन : सरदार मान सिंह सरबाह गुरद्वारे साहिबान, सरदार कान्ह सिंघ मजीठिया रईस, भाई हरनाम सिंघ ग्रंथी दरबार साहिब, भाई गुलाब सिंघ महंत अकाल बुंगा साहिब, भाई तेजा सिंघ मुहतमिम श्री अकाल बुंगा साहिब, भाई जवाहर सिंघ मुहतमिम अकांल बुंगा साहिब, भाई प्रताप सिंघ, सुंदर सिंघ, शेर सिंघ, भाई करम सिंघ अरदासिया श्री दरबार साहिब, सरदार जसवंत सिंघ पुजारी दरबार साहिब, ठाकुर सिंघ पुजारी, भाई देवा सिंघ धूपीआ, भाई मुलताना सिंघ, भाई संता सिंघ पुजारी, भाई हरदित्त सिंघ, भाई टेक सिंघ पत्तीदार अकाल बुंगियां, चंचल सिंघ, प्रेम सिंघ अकाल बुंगिया, भाई नरायण सिंघ नंबरदार, बाबा अटल राय साहिब जी भाई जवाहर सिंघ, भाई धन्ना सिंघ, बाबा अटल राज जी के सुखई, भाई दरबारा सिंघ झंडे बंगियां भाई कृपाल सिंघ झंडे बुंगिया, गुरदित्त सिंघ निशानची, भाई संत सिंघ नंबरदार, भाई नरायण सिंघ जी ग्रंथी, श्री तरन तारन साहिब (देखो, रिपोर्ट खालसा दीवान, अमृतसर 1887)।

इस के अतिरिक्त तख्त केस गढ़ (आनंदपुर साहिब), तख्त पटना साहिब (बिहार), तख्त दमदमा साहिब (तलवंडी साबो) ओर तख्त अबचल नगर हजूर साहिब (नंदेड़-दखण) से भी इसी भाव के हुकमनामे संगत के नाम जारी करवाए गए। इसके पश्चात कपूरथला, जलंधर, फिल्लौर, शाह कोट (जलंधर) खुमाणों फतेहगढ़ (पटियाला), घडूंआं, गडूंकां (खरड़ - अंबाला), खरड़ बसी, छछरोली, छरोली, बूड़िआ, कीरतपुर, गुजरावाला, रावलपिंडी आदि स्थानों की सिंघ सभाओं ने बाबा खेम सिंघ जी के प्रभाव में आ कर भाई गुरमुख सिंघ के विरुद्ध फैसले पर स्वीकृति की मोहर लगाई।

अकाल तख्त से इस हकमनामे के निकलने पर कुछ समय भाई गुरमुख सिंघ को निराशा के वातावरण में गुजरना पड़ा और वे लाहौर छोड़ कर कंवर बिक्रम सिंघ के घर जलंधर आ गए। अमृतसरी पार्टी ने समझ लिया कि बस अब जब गुरमुख सिंघ पंथ में से छेद दिया गया तो मैदान अपने हाथ में

है। पर यह उस का गलत अनुमान था। खालसा अखबार में इस समय ज्ञानी दित्त सिंघ द्वारा धड़ा–धड़ लेख निकलने लगे जिन का मुख्य मंतव्य पंथक जागृति थी। सिख जन मानस जो पहले ही पुजारियों और संतों महंतों के रवैये से क्षुब्ध था, बहुत जल्द ही इधर झुका, जिस के कारण हालात बदलते गए। अचानक इस समय खालसा दीवान लाहौर के प्रमुखों में कुछ एकता भी हो गई जिस के कारण भाई गुरमुख सिंघ जी लाहौर से निमंत्रण आने पर फिर उसी प्रकार पंथक सेवा में हाजिर हो गए।

सुपन नाटक का मुकद्दमा : ज्ञानी दित्त सिंघ जी इस समय खालसा अखबार के संपादक थे। उन्होंने इस पत्र में भाई गुरमुख सिंघ की छेदने– छिदाने के बारे में अमृतसरी धड़े की वास्तविकत्ता अपने पाठकों को खोल कर बताई। फरीद कोट के सम्मिलन से ले कर अमृतसर के फैसले तक, भाई गुरमुख सिंघ ने अकाल तख्त से खारिज किए जाने का सारा किस्सा सुपन नाटक के रूप में हास्य रस के रूप में कलमबंद करके छापा। इस नाटक में राजा बिक्रम सिंघ, बाबा खेम सिंघ बेदी, ज्ञानी झंडा सिंघ, ज्ञानी संत सिंघ बाबा सुमेर सिंघ महंत पटना (बिहार) बाबा उदै सिंघ बेदी (कपूरथला) आदि मुखियों के बारे में बहुत करड़ी आलोचना की और सब का मौजू उड़ाया था। इस नाटक के प्रकाशित होने पर बाबा उदै सिंघ बेदी (कपूरथला) ने इस में अपना अपमान समझा जिस के कारण लाहौर अदालत का दरवाजा जा खटखटाया। मानहानि का मुकदमा चलने पर दोनों पक्षों के गवाह भुगते। अंत में फैसला होने पर ज्ञानी दित्त सिंघ को अदालत की ओर से 51 रुपए जुर्माना हुआ। बाद में ऊपर की कचैहरी में अपील करने पर ज्ञानी जी साफ बरी हो गए और यह जुर्माना भी माफ हो गया। अमृतसरी धड़ें की इस जदोजहिद में बड़ी जबर्दस्त हार हुई।

लाहौर में एक और सिंघ सभा : सुपन नाटक व मुकदमे पर चूंकि सारा खर्च श्री गुरू सिंघ सभा लाहौर का हुआ तथा इस लिए बसंत सिंघ नामी एक सज्जन, जो इस सभा के माने हुए कर्मचारी थे और कुछ समय खालसा अखबार के संपादक भी रह चुके थे, इस समय अचानक बिगड़ गए। असल में ज्ञानी दित्त सिंघ की उनके साथ कुछ अनबन थी। इसलिए वे चाहते थे कि इस मुकदमे का सारा व्यय ज्ञानी जी के जिम्मे ही डाला जाय। पर यह राय अन्य मुखियों को अच्छी न लगी। इस के कारण भाई बंसत सिंघ जी, सिंघा सभा से अलग हो गए। उन्होंने कुछ सिखों के साथ मिल कर लाहौर में ही अपनी एक और अलग सिंघ सभा बना ली।

खालसा कालेज कैसे बना?

प्रांभिक प्रयास : जैसा कि पहले बताया जा चुका है, कि सिख शैक्षणिक लहर, सन 1880 में ही चल पड़ी थी और भाई गुरमुख सिंघ ने खालसा कालेज बनाने के लिए प्रचार करना शुरू कर दिया था। सिंघ सभा में इस बारे में एक प्रस्ताव भी रखा गया और गुरमुखी अखबार में इस विषय पर लेख भी लिखे गए । इसके पश्चात 5 आषाढ़ संवत 414 नानकशाही (तदनुसार सन 1883 ई०) को लाला संत राम की कोठी अमृतसर में सिखों की बैठक हुई। जिस में पंथक मुखियों के आगे भाई गुरमुख सिंघ ने खालसा कालेज स्थापित करने के लिए अपने विचार प्रस्तुत किए। सब ने एकमत से इस विचार की पुष्टि की और गुरमता पास करके एक कमेटी नियुक्त कर दी। इस में बाबा खेम सिंघ बेदी व चार–पांच अन्य सज्जन लिए गए।

लाट साहिब को सम्मान पत्र : दूसरी बार सिख मुखियों की ऐसी ही एक और बैठक लाहौर के लारंस हाल में हुई जिस में कंवर बिक्रम सिंघ, बाबा खेम सिंघ बेदी, सरदार मान सिंघ सरबराह, कप्तान

गुलाब सिंघ अटारी, सरदार हरिनाम सिंघ खरड़, भाई भगत सिंघ ग्रंथी दरबार साहिब अमृतसर, भाई मीहां सिंघ, लाहौर, सरदार भगवंत सिंघ सपुत्र सरदार अत्तर सिंघ भदौड़ा (पटियाला), सरदार सुजान सिंघ और मलिक खजान सिंघ रावलपिंडी, भाई गुरमुख सिंघ आदि सज्जन शामिल हुए। इस बैठक में परामर्श करके एक सम्मान पत्र लार्ड डफरन की सेवा में 22 अप्रैल, सन 1885 को शालामार बांग में दिया गया। इस के उत्तर में लाट साहिब ने सिखों की शैक्षणिक लहर से हमदर्दी प्रकट की।

सिख रइसों की हार्दिक इच्छा : अब सिंघ सभा लाहौर के प्रमुखों का उत्साह और भी बढ़ा भाई गुरमुख सिंघ जी गवर्नमैंट से इस कार्य के लिए सहायता मांगने लगे। सिख रियासतों में चंदा एकत्र करने के लिए उन्होंने कई दौरे किए पर कुछ निराशा ही हाथ आई। महाराजा फरीद कोट ने कहा कि मेरे नाम पर कालेज बनाओ तो सहायता मिल सकती है। इसी प्रकार कई और राजा महाराजा व रईसों ने भी इच्छा प्रकट की। भाई गुरमुख सिंघ ने सब को यही उत्तर दिया कि कालेज का साझा नाम खालसा कालेज ही रहेगा और चंदा भी आपको देना ही होगा। सिख रइसों में से इस समय सरदार दयाल सिंघ मजीठिया एक ऐसा व्यक्ति था जो संतान न होने के कारण अपनी लाखों रूपए की सारी संपत्ति इस ओर लगा देना चाहता था पर उस की हार्दिक इच्छा भी यही थी कि यदि कालेज का नाम उस के नाम पर सरदार दयाल सिंघ खालसा कालेज रख दिया जाए जो उसको इस सहायता देने के बारे में कोई आपत्ति नहीं होगी सिख क्योंकि अपने कालेज को व्यक्तिगत रंगत नहीं देना चाहते थे, इसलिए सरदार दयाल सिंघ की इस शर्त को अन्य रइसों की भांति ही अस्वीकार कर दिया गया।

चंदा एकत्र करना : सन 1885 के पश्चात, सरकार क्योंकि सिखों की राज्यभक्ति से काफी प्रसन्न थी, इसलिए खालसा दीवान लाहौर को इस शैक्षणिक लहर को चलाने के लिए और भी उत्साह मिला। इस के कारण सन 1989 में खालसा कालेज स्थापना कमेटी बनाई गई। इस कमेटी का पहला इजलास 22 फरवरी 1890 ई० को लाहौर में हुआ। सरकारी आदेश से क्षेत्रानुसार चंदा एकत्र करने की फर्द बन गई और सिख रईसों के पास सरकार द्वारा बाकायदा परिपत्र भेजे गए। एक डेपुटेशन, जिस के प्रमुख भाई गुरमुख सिंघ व सरदार जवाहर सिंघ थे, चंदा एकत्र करने के लिए सिख महाराजाओं के पास पहुंचा महाराजा पटियाला ने सब से पहले डेढ लाख रुपया दिया ओर खालसा कालेज की शुरुआत हुई। इस के बाद महाराजा नाभा ने एक लाख पांच हजार, कौंसल जींद ने 75 हजार व महाराजा कपूरथला ने एक लाख चंदा दिया। अन्य अंग्रेजी क्षेत्र से भी काफी सहायता प्राप्त की गई।

खालसा कालेज कहां बने? इस प्रकार कई लाख रुपए एकत्र होने पर विचार छिड़ी कि खालसा कालेज कहां पर बनाया जाए – लाहौर में या अमृतसर में? खालसा दीवान लाहौर के प्रमुखों की राय लाहौर के पक्ष में थी। सरकार भी चाहती थी कि यह कालेज लाहौर में ही बनाया जाए। स्थान का प्रस्ताव भी गवर्नमेंट कालेज व डी. ए. वी. स्कूल के आस पास का ही होने लगा। यह देख कर आर्य समाजियों को पिस्सू पड़ गए। उन्होनें सोचा कि यदि खालसा कालेज लाहौर में ही बन गया तो उनके डी ए वी कालेज की योजना तो धरी की धरी रह जाएगी। क्योंकि इतना चंदा, एकत्र करने की उनमें शक्ति नहीं थी। बहुत मुश्किल से वे दो आने, चार आने या रुपया दो रुपए चंदा एकत्र करके अपना डी. ए.वी. स्कूल चला रहे थे। अति चतुर होने के कारण उन्होंने सिखों की धड़े बंदी को दूर से ही भाप लिया। खालसा दीवान अमृतसर के मैंबर कुछ दिन पहले ही प्रचार कर रहे थे कि भाई गुरमुख सिंघ क्योंकि अकाल तख्त से छेदे हुए हैं इसलिए उनको कोई सहायता न दी जाए।

अमृतसरी धड़े की जदोजहद : इसी विचार से बहुत से लोगों के हस्ताक्षर करवा कर उन्होंने इस प्रकार की इश्तिहारबाजी भी की थी। आर्य समाजियों के साथ मिल कर अब उन्होंने प्रचार का नया रुख अपनाया और इस बात पर बल दिया जाने लगा कि अमृतसर चूंकि गुरू की नगरी है, इसलिए खालसा कालेज यहीं पर ही बनाया जाए। शहरों, नगरों व गांवों के लोगों से हस्ताक्षर करवा कर इस समय सरकार क पास धड़ा धड़ मैमोरंडम भेजे जाने लगे और सैंकड़े तारें भी इस संबंध में दी गई। पहले तो सरकार ने सिखों को समझाने की कोशिक की पर बाद में मजबूर हो कर फैसला अमृतसर के हक में ही करना पड़ा।

खालसा कालेज की स्थापना : इसके पश्चात फिर अमृतसर के बारे में भी प्रश्न उठा कि कालेज कहां पर बनाया जाए। सरकार तो इस शुभ कार्य के लिए रेलवे स्टेशन के साथ ही राम बाग की जमीन सिखों को देना चाहती थी। पर कुछ नेताओं ने सोचा कि यदि शहर के पास कालेज बन गया तो विद्यार्थियों के आचरण, शहरी जीवन का बुरा प्रभाव पड़ेगा इसलिए अमृतसर के पश्चिम उत्तर की ओर, 4 मील के फासले पर लाहौर को जाने वाली सड़क के बांए हाथ पर गांव कोट सैद महिमूद के जिमींदारों से 100 एकड़ जमीन खरीदी गई, जहां पर 5 मार्च सन 1892 ई० को सर जेम्ज लायल लाट साहिब पंजाब के हाथों खालसा कालेज की नींव रखी गई।

कालेज के पदाधिकारी : कई यूरोपीयन अधिकारी, जिन में से मिस्टर जे साईम डायरेक्टर आफ पब्लिक इन्स्ट्रक्शन (पंजाब), मिस्टर जे० सी० ओमन, कर्नल हालरायड, और सर विलियम राटीगन अधिक प्रसिद्ध थे भाई गुरमुख सिंघ के साथ कंधे से कंधा लगाकर इस शैक्षणिक संस्था की कामयाबी के लिए प्रयत्न करते रहे थे। इसलिए उनमें से सर विलियम राटीगन इस कलेज के प्रधान, व मिस्टर जे० सी ओमन प्रिंसिपल नियुक्त किए गए। खालसा दीवान लाहौर के मुखियों में से सरदार जवाहर सिंघ को खालसा कालेज कौंसल का सचिव नियुक्त किया गया।

उन्नति की राह पर : सन 1893 में 'खालसा कालेज' स्कूल खुलने से पूर्व मिडल तक पढ़ाई शुरू हुई। फिर सन 1896 में इस कालेज में हाई स्कूल व एफ. ए. की कक्षाओं का आयोजन किया गया। इसके तीन वर्ष पश्चात इस कालेज की पढ़ाई बी. ए. तक व फिर कुछ समय बाद एफ. एस. सी. व बी. एस. सी० तक जा पहुंची। सरदार सुंदर सिंघ मजीठा ने तन-मन व धन से सेवा करने के बाद, इस कालेज को और भी उन्नत किया।

इस प्रकार सिखों की यह अद्वितीय शैक्षणिक संस्था, जो एक गरीब सिख की कुर्बानियों का फल है, पंजाब के एक प्रसिद्ध शाही कालेज की शक्ल में बदल गई।

दीवान लाहौर के अंतिम वर्ष

दीवान लाहौर की सफलता : भाई गुरमुख सिंघ को अकाल तख्त से छेदने का जो नाटक रचा गया वह अमृतसरी धड़े का अंतिम वार था। पर इस में असफलता ही हुई। खालसा कालेज बनने के बाद दीवान लाहौर की कामयाबी के कारण उस के प्रचार आदि के कामों में और भी तरक्की हुई। भाई गुरमुख सिंघ की शोहरत बढ़ने लगी।

बेदी साहिब की पंथक सेवा और निराशा : बाबा खेम सिंघ जी बेदी गुरुअंश होने के कारण भले ही अपनी पूजा प्रतिष्ठा के चाहवान थे व संगत में गद्दी लगा कर भी बैठते थे। पर पंथक उन्नति के कामों में वे किसी बात में पीछे नहीं रहते थे। कुछ समय पहले रावलपिंडी के क्षेत्र में उन्होंने सिख

लड़कियों की विद्या के लिए हजारों रुपए व्यय किए थे और अब खालसा कालेज के लिए भी बढ़-चढ़ कर सहायता की थी। इसलिए पंथ से वे हर तरह सम्मान के पात्र रहे, पर इस के बदले में मिला क्या? केवल हताशा और निराशा-वह भी उनके अपने ही धड़े द्वारा। कुछ मुखी लोग, जिन में अधिकांश पुजारी थे, अपने निजी स्वार्थ के लिए, कई उलट पुलट बातें कर तो जाते थे, पर नाम उन में बाबा खेम सिंघ जी का प्रयोग किया जाता था। इसलिए बाबा जी इस समय पंथक सेवा से कुछ पीछे हटने लग गए।

पुजारियों का डर : भाई गुरमुख सिंघ के साथ बाबा खेम सिंघ जी का अलगाव तो था पर वह केवल सैद्धांतिक था और कोई बुनियादी विरोध नहीं था। पर कई पुजारी व धर्मशालिए भाई, जिनके हाथों में गुरद्वारों की जायदाद थी, भाई गुरमुख सिंघ के सुधारिवादी कामों से बुनियादी तौर पर विरोध करते थे। उनको डर था कि कहीं इस सुधारों के अधीन उनकी संपत्तियां ही न छिन जाए। इसीलिए वे भाई साहिब के प्रचारक को कैरी आंख से देखते थे। अतः यह विरोध बढ़ता ही चला गया।

दो महिजर नामे (प्रस्ताव) : सन 1890 में जब खालसा कालेज के लिए चंदा एकत्र किया जा रहा था तो कुद लोगों ने जिन में पुजारी थे, एक महिजर नामा इस भाव का तैयार किया कि भाई गुरमुख सिंघ और ज्ञानी दित्त सिंघ तनखाहिए (सिक्ख धर्म से निष्कासित) हैं, इसलिए इन को चंदा न दिया जाए। पर जब इस का असर सिख जनता पर कुछ भी न हुआ और खालसा कालेज बन ही गया तो 150 लोगों के हस्ताक्षरों से एक और दूसरा महिजर नामा लिखा गया। उसका भाव भी यही था कि भाई गुरमुख सिंघ चूंकि सिखी से खारिज है इसलिए इस को कालेज कौंसल का मैंबर न बनाया जाए।

खालसा प्रैस और अखबार : भाई गुरमुख सिंघ जी अपनी धुन के पक्के थे। इसलिए इन कागज़ी हमलों का उन के दिल पर कोई भी विपरीत असर न हुआ। खालसा कालेज की स्थापना से फारिग होते ही उन्होंने खालसा प्रैस, खालसा अखबार का प्रबंध नये सिरे से व्यवस्थित किया। खालसा प्रैस के लिए नया टाईप फाट खरीदा गया। खालसा अखबार, जो सन 1887 में सुपन नाटक के मुकदमे में उलझने के कारण कुछ समय बाद बंद हो गया था, को सन 1893 से फिर नये सिरे से शुरू कर दिया गया।

दीवान के अग्रणियों में : खालसा दीवान लाहौर की अब चढ़दी कला थी पर जहां उन्नति हो वहां पर अवनति के दिन भी देखने ही पड़ते हैं। इसलिए थोड़े समय बाद ही अमृतसरी धड़े की भांति इस दीवान के मैंबरों में भी आपसी फूट हावी होने लगी। बड़ी आपत्ति यही थी कि भाई गुरमुख सिंघ द्वारा खालसा कालेज में हर तरफ जाट सिखों की मदद की जाती है। भाई बसंत सिंघ, सरदार जवाहर सिंघ और मइया सिंघ गैर जाट सिख होने के कारण इस बात के विरुद्ध थे। भाई मइया सिंघ ने इस समय भाई गुरमुख सिंघ के विरुद्ध इश्तिहारबाजी करके कुछ अयोग्य प्रचार भी किया। सारे मैंबरों में से ज्ञानी दित्त सिंघ आदि कुछ उंगलियों पर गिने जा सकने वाले सज्जन ही थे, जिन्होंने इस धड़ेबंदी में कोई हिस्सा नहीं लिया।

सरदार अत्तर सिंघ भदौड़ का स्वर्गवास : इस शोर-शराबे के दौरान ही खालसा कालेज तथा दीवान को एक कड़ी चोट लगी। वह चोट यह थी कि सरदार अत्तर सिंघ जी रईस भदौड़ (पटियाला) जो दीवान लाहौर के प्रधान और खालसा कालेज के अग्रणी थे, का 10 जून सन 1896 ई० को देहांत हो गया।

दीवान लाहौर के मुखियों का चुनाव : सरदार अत्तर सिंघ का खालसा कालेज के प्रबंध में अच्छा प्रभाव था। इसलिए यदि कोई शिकायत होती तो तुरंत रफा-दफा हो जाती थी। लगभग एक

मास के बाद इनके बारे में अफसोस प्रकट करने के लिए गवर्नमैंट कालेज लाहौर में गिने चुने मैंबरों की बैठक हुई जिस में खालसा दीवान लाहौर के नीचे लिखे मुखी चुने गए।

(1) सरदार बलवंत सिंघ (सपुत्र सरदार अत्तर सिंघ जी भदौड़) – प्रैजीडेंट ।

(2) भाई गुरमुख सिंघ और भाई धर्म सिंघ जी रईस, घरजाख – वाईस प्रैजीडैंट

(3) भाई गुरदित्त सिंघ रईस, लाहौर – चीफ सैक्रेटरी

(4) भाई प्रताप सिंघ – लेखाकार

(5) भाई प्रताप सिंघ – खजांची

भाई गुरमुख सिंघ ने पिछले 13 सालों में इस दीवान की जो सेवा की थी, उसके बारे में उनका आभार प्रकट किया गया।

नामधरीक यानी नाममात्र की एकता : खालसा दीवान लाहौर के मुखियों के चुनाव के बाद आपस की फूट दूर करने के लिए एक बार फिर प्रयत्न किया गया। लाहौर की दोनों सिंघ सभाएं, जो पहले अलग – अलग थीं, इस समय एक हो गई। भाई गुरमुख सिंघ का इस एकता में कोई दखल नहीं था। इस से मालूम होता है कि यह कारवाई एक पक्षीय थी। इस जुट सभा के प्रधान भाई मीहां सिंघ और उप प्रधान भाई बसंत सिंघ और सरदार जवाहर सिंघ जी नियुक्त किए गए। दोनों सभाओं के इस मेल से शायद इसी कारण लाभ न हुआ। भगत लछमन सिंघ के कथनानुसार भाई जवाहर सिंघ अपने लीडर भाई गुरमुख सिंघ के मातहत मालूम होते थे पर अंदर से उन की बागडौर तोड़ने के मंसूबे बना रहे थे। इसलिए इस हार्दिक भावना का खालसा दीवान लाहौर के भविष्य पर बहुत बुरा असर पड़ा।

भाई गुरमुख सिंघ का निधन : सरदार अत्तर सिंघ का देहांत हो जाने के बाद खालसा दीवान लाहौर के हालात कुछ तेजी से फिल्म की तस्वीरों की भांति बदलने लगे। लाहौरी धड़े के अग्रणी भाई गुरमुख सिंघ, जो इतनी बड़ी आयु के नहीं थे, खालसा कालेज की, जदो – जहिद के दिनों में कमजोर हो गए। इससे थोड़ा समय पश्चात उनको कुछ दिल की बीमारी होने लगी। इस दौरान काफी कर्ज का भार भी सिर पर आ चढ़ा । अपनी सेहत ठीक करने के लिए उन्होंने पंथक कामों से एक साल का अवकाश भी ग्रहण किया पर इस का कोई विशेष लाभ नहीं हुआ।

जब सिख कौम जरा गर्दन उठाने लायक हुई तो मौत भी, इस सिख धर्म के सच्चे विशवासु, हितैशी और कौम के बलवान चौकीदार, पंजाबी भाषा के मददगार, सिख इतिहास के खोजी, खालसा पंथ के विद्वान, उच्च, निर्मल व कौम को खालिस देखने के चाहवान की उपमा व सेवा न सहार सकी। अंततः 24 नवंबर सन 1998 ई० को जब वह महाराणा धौल पुर से चंदा लेने के लिए कंडे घाट (पटियाला रियासत) गए थे तो श्री नगर के मुकाम पर दिल की हरकत बंद हो जाने के कारण उनका देहांत हो गया।

गुण, कर्म और स्वभाव : भाई गुरमुख सिंघ की यह असामयिक मृत्यु खालसा दीवान लाहौर के लिए असहय चोट ही थी। खालसा कालेज के लिए इसकी क्षतिपूर्ति नहीं हो सकती थी। भाई साहिब सचमुच ही सिखों के एक बड़े नेता व पंथक भलाई की उच्च योजनाएं बनाने वाले थे। यदि उन को सिखों का सर सैयद अहमद खां कहा जाय तो कोई अनुचित या अतिशयोक्ति न होगी। भगत लछमण सिंघ जी जिन्होंने उन को आंखों से देखा था, पंथक सेवाओं के बारे में उन की प्रशंसा करते हुए मार्च सन 1941 की पत्रिका पंज दरिया (लाहौर) में इस प्रकार लिखते हैं: –

''सिख रजवाड़ो की उदारता तो मानी हुई कहावत है और वह अपने प्रयत्नों से सिखी प्रचार के लिए दिल खोल कर दान देते थे पर किसी को क्या पता था कि सिखों को पुनर्जागृत करने का सेहरा एक गरीब सिख जाट (जिन का पिता सरदार बिक्रम सिंघ कपूरथला वालों के पास नौकर था और जलंधर का निवासी था।) के सिर बंधेगा। मेरी मुराद भाई गुरमुख सिंघ जी से है जिन को सिखी की सेवा की वह लगन थी कि शायद ही किसी को होगी ।......... आपने कौम को ऊंचा उठाने का प्रयास किया पर स्वंय कभी ऊंचा होने का स्वपन नहीं लिया था। 70 – 80 रूपए महीना वेतन मिलता था। .... । संतान थी नहीं, केवल एक धर्मपत्नी ही थी ....। रोटी कपड़ा से जो बचता वह सिख नौजवानों की पढ़ाई पर व्यय होता था।''

भाई गुरमुख सिंघ की यादगार का प्रश्न : भाई साहिब के पश्चात ज्ञानी दित्त सिंघ जी ने, जो उनके साथ हार्दिक प्यार व सम्मान करते थे, कुछ अग्रणियो को चेता कर भाई गुरमुख सिंघ मैमोरियल बनाने का प्रयत्न किया पर सिंघ सभियों का दूसरा धड़ा यह नहीं चाहता था इसलिए सफलता नहीं मिली।

ज्ञानी दित्त सिंघ का स्वर्गवास : ज्ञानी दित्त सिंघ जी इस समय विद्या, बुद्धि और अनुभव के लिहाज से सारे सिखों में से शिरोमणी थे। इसलिए आशा थी कि वे थोड़ा सा संघर्ष करके खालसा दीवान लाहौर की बिगड़ रही दशा को जल्द ही सुधार लेंगे। पर 'आसां करदा लंमीआं, मौत तणावां हेठ' वाली बात हुई। 6 सिंतबर सन 1901 ई० को सिखों के इस अद्वितीय विद्वान व अग्रणी ज्ञानी दित्त सिंघ को भी प्रभु के दरबार से निमंत्रण आ गया जिस के कारण वे अपने साथियों को निराश छोड़ कर स्थाई तौर पर इस दुनियां से चले गए।

खालसा दीवान लाहौर के अंतिम दिन : इस प्रकार बारी – बारी तीन अग्रणियों का देहांत होने पर खालसा दीवान लाहौर का शीराजा अपने आप बिखर गया। इस से अगले ही साल किसी बात से प्रिंसीपल ओमन के नाराज हो जाने के कारण खालसा कालेज की बागडोर सरदार जवाहर सिंघ कपूर के हाथों से निकल कर सरदार सुंदर सिंघ मजीठा के हाथ चली गई। सन 1905 में खालसा अखबार बंद हो गया और खालसा प्रैस भी बंद हो गया। सरदार जवाहर सिंघ जी इस दशा में निराश हो कर सामाजिक जीवन से एक ओर हो गए। फिर 10 फरवरी सन 1910 ई० को उन का यह बचा खुचा अंतिम निशान भी लुप्त हो गया।

सरदार सुंदर सिंघ जी मजीठा का प्रबंध : इस लहर का नया रुख पलटने के लिए सरदार सुंदर सिंघ मजीठा, जो समय के अनुसार बहुत प्रगतिशील व कर्मवीर नौजवान नेता थे, सन 1892 – 93 में पंथक सेवा के मैदान में आए । पहले आप खालसा दीवान अमृतसर व बाद में सन 1895 में खालसा कालेज कौंसल के मैंबर बने। आप सरदार अत्तर सिंघ रईस भदौड़ा (पटियाला) के रिश्तेदार थे। सरदार अत्तर सिंघ चूंकि दीवान लाहौर के प्रधान थे, इसलिए सरदार सुंदर सिंघ को उन के सहयोग से इस ओर बढ़ाने का और भी उत्साह मिला।

सरदार सुंदर सिंघ व जवाहर सिंघ : खालसा दीवान लाहौर में इस समय फूट का राज्य था। सरदार सुंदर सिंघ ने इस दशा को बहुत गहरी निगाह से देखा। खालसा दीवान अमृतसर की अवस्था भी उनकी आंखों से दूर नहीं थी। दोनों धड़ों की इस तोड़ – फोड़ या धड़ेबंदी से ऊपर उठकर सरदार सुंदर सिंघ का इरादा कुछ ठोस सेवा करने का था। इस के लिए उन्होंने खालसा कालेज कौंसल के प्रबंध में

बड़ी गर्म जोशी से हिस्सा लेना शुरू किया।इस समय खालसा कालेज के सचिव सरदारा सिंघ थें। सरदार अत्तर सिंघ भदौड़ के देहांत के बाद सरदार सुंदर सिंघ की उनके साथ किसी बात से अनबन हो गई। कुछ समय बाद विवाद भी चलता रहा पर ऐसी आधारहीन बहसों में पड़ने की जगह सरदार सुंदर सिंघ के सामने अपनी पार्टी को मजबूत करना सब से अधिक जरूरी बात थी। सरदार बलवंत सिंघ भदौड़ जो इस समय खालसा दीवान लाहौर के प्रधान थे, उन के लिए बहुत सहायक सिद्ध हुए।

समय की अनुकूलता : लाहौर दीवान के संस्थापकों में से सरदार अत्तर सिंघ जी सन 1896 में भाई गुरमुख सिंघ जी का सन 1998 में और प्रसिद्ध विद्वान लिखारी ज्ञानी दित्त सिंघ जी का सन 1901 में देहांत हो गया। पीछे रह गए सरदार जवाहर सिंघ व भाई मइया सिंघ । वे इतने बड़े काम को संभाल नहीं सकते थे। इसलिए सरदार सुंदर सिंघ को इस दिशा में बढ़ने तथा अपनी योग्यता दिखलाने का और भी अच्छा अवसर मिला।

नये दीवान की आवश्यकता : सरदार सुंदर सिंघ ने इस समय खालसा दीवान अमृतसर को कुछ प्रगतिशील बनने पर उसकी सिंचाई की। कुछ मैंबरों की कांट छांट भी की और अमृतसरी धड़े के जो अधोगामी विचार थे उनको पोंछ कर एक ओर किया। उसको नई दिशा देने के बारे में योजना बनाई। यह नई योजना उस को नया रंग रूप दे कर चीफ खालसा दीवान की शक्ल में पलटने की थी। पर यह क्रांति लाने से पूर्व खालसा दीवान लाहौर को हाथों पर चढ़ाना भी जरूरी था। इसकी आवश्यकता इसलिए पड़ी कि खालसा दीवान के बहुत से मैंबर सन 1895 से ही जाट और गैर जाट सिख का प्रश्न छिड़ जाने के कारण टूटने लग गए थे। इस समय ऐसे मैंबरों की बहुसंख्या सरदार सुंदर सिंघ के साथ थी। इसलिए 11 नवंबर सन 1901 ई० को अमृतसर में चुनींदा सिखों की एक बैठक बुलाई गई जिस में पूरी सम्मति से यह प्रस्ताव पास किया गया।

"आज की कुल खालसा की बैठक पूरी सम्मति से यह प्रस्ताव पास करती है कि पंथ को एक ऐसे दीवान की आवश्यकता है जो पंथ का खालसा दीवान समझा जाए और जो पंथ की कुल जरूरतों को जो आज कल अधूरी हैं, पूरा कर सके......... ।"

चीफ खालसा दीवान की स्थापना : इसी आधार पर खालसा दीवान लाहौर को सूचना दी गई कि वह आपने आपको इस मापदंड पर पूरा उतार कर बताए। भाई मइया सिंघ व अन्य अग्रणी इस समय खीझे तो बहुत, पर शक्ति क्षीण होने के कारण कोई उत्तर न दे सके। इस के बाद 30 अक्तूबर सन 1902 को मलवई बुंगा अमृतसर में सरदार सुंदर सिंघ ने चुनींदा सिखों की एक बैठक बुलाई। इस बैठक में सर्वसम्मति से पास होने पर एक नये दीवान की नींव रखी गई जिस का नाम चीफ खालसा अथवा शिरोमणी खालसा दीवान रखा गया। बाबू तेजा सिंघ जी भसौड़ा (पटियाला) ने इस दीवान की प्रथम अरदास की। भाई अरजन सिंघ जी बागड़ियां प्रधान और सरदार सुंदर सिंघ मजीठा इस दीवान के सचिव नियुक्त हुए।

खालसा कालेज में दरबार : चीफ खालसा दीवान की स्थापना होने पर सरदार सुंदर सिंघ ने सामने दो काम थे : (1) खालसा कालेज को स्थाई व सुदृढ़ बनाना (2) और सिख शैक्षणिक लहर को और तेजी से चलाना। इस समय खालसा कालेज की आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी। भवन निर्माण का काम भी बीच में ही लटका पड़ा था। सन 1903 में सर चार्ल्स रीवाज़ लाट साहिब पजांब खालसा कालेज में आए। उन्होंने सारी दशा देख कर मेजर डनलप स्मिथ पोलीटीकल एजेंट फूलकियां रियासतों

को भांप कर देखा। महाराजा हीरा सिंघ नाभा का उस समय सिख राजाओं महाराजाओं व रइसों में बहुत प्रभाव व मेल – जोल था। उन्होंने इस काम के लिए अग्रणी बनना स्वीकार कर लिया जिसके कारण 12 अप्रैल 1904 ई को खालसा कालेज अमृतसर में एक बड़ा भारी दरबार किया गया। इस दरबार में महाराजा हीरा सिंघ के सामने सरदार सुंदर सिंघ के झोली फैलाने पर सब को इस संस्था के साथ बहुत हमदर्दी पैदा हो गई। इस के कारण पलभर में ही 21 लाख रुपए चंदा जमा हो गया। इस चंदे के द्वारा खालसा कालेज की आलीशान इमारतें बनाई गई व आगे के लिए अन्य प्रबंध स्थाई तौर पर व्यवस्थित रूप से चल पड़ा।

सिख शैक्षणिक कमेटी : इस ओर से निपट का सरदार सुंदर सिंघ ने सिखों की शैक्षणिक लहर की ओर ध्यान दिया। खालसा दीवान लाहौर की ओर से इस ओर पहले भी काफी प्रयत्न हो चुका था। सन 1900 में सिख शैक्षणिक कान्फ्रेंस करने के बारे में एक प्रस्ताव भी पास किया गया था। बाबू गुलाब सिंघ जी गुजरांवाले इस प्रकार के अग्रणी थे। सन 1907 में क्रिसमिस के अवसर पर चीफ खालसा दीवान की एक पार्टी प्रचार के लिए कराची गई। उन्हीं दिनों वहां पर मुस्लिम तालीमी कान्फ्रेंस का जलसा था जिस को देख कर हमारे प्रचारकों का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ। इसलिए वहां से वापिस आते ही सरदार सुंदर सिंघ ने 9 जनवरी, सन 1908 को मजीठा हाउस अमृतसर में 21 वा – रसूब मैंबरों की एक बैठक बुलाई जिस में प्रस्ताव पास होने पर सिख शैक्षणिक कमेटी की स्थपना की गई। इस कमेटी ने कान्फ्रेंस करके सारे पंजाब में खालसा स्कूल खोले और शिक्षा का अच्छा प्रचार किया।

पंच खालसा दीवान भसौड़ : अब सिंघ सभा लहर की जगह पर पैदा हुआ दीवान – लहर का अगला क्रम आरंभ होता है। जब अमृतसर में चीफ खालसा दीवान स्थापित हुआ तो बाबू तेजा सिंघ जी, जिन्होंने इस दीवान की प्रांभिक अरदास की थी, मालवा में शुद्ध धार्मिक प्रचार द्वारा दिलचस्पी रखने वाले एकाएक व्यक्ति थे। उन्होंने श्री गुरु सिंघ सभा भसौड़ (धुरी) तो इस से पूर्व ही स्थापित कर ली थी। पर अब अचानक उन की किसी बात से सरदार सुंदर सिंघ मजीठा के संग नोक – झोंक हो गई थी। इस कारण इन्होंने बैसाखी सन 1905 ई० को अपने साथियों की राय से अलग जत्थेबंदी गांव भसौड़, रियासत पटियाला में बना ली। इस जत्थेबंदी का नाम पहले केवल खालसा दीवान भसौड़ और फिर पंच खालसा दीवान, अर्थात – खालसा पार्लियामेंट रखा गया। इस दीवान के अधीन गुरमति का बहुत अच्छा प्रचार हुआ। बाबू तेजा सिंघ ने लड़कियों का एक स्कूल भी खोला जिसका नाम विद्या भंडार था।

अंतिम परिणाम : पंच खालसा दीवान की नकल करते हुए पहले खालसा दीवान नाभा, फिर गढ़गज्ज अकाली दीवान तरन तारन –ये दो नये दीवान स्थापित हुए। इन के अतिरिक्त आगे चल कर फिर कई और दीवान बने जैसे सैंट्रल माझा खालसा दीवान, खालसा दीवान मलाया, ब्रहमा आदि। इससे पता चलता है कि सन 1902 के पश्चात सिंघ सभा व दीवान के अर्थ एक ही हो गए थे। पुरानी सिंघ सभा लहर समाप्त हो कर या दूसरे शब्दों में बदल कर अब दीवान लहर की सूरत में परिवर्तित हो गई थीं। यह दीवान केवल धार्मिक थे, पर बाद में गड़गज्ज अकाली दीवान व सैंट्रल माझा खालसा दीवान कुछ राजनीतिक रंग में रंग गए जिस के कारण इन दोनों जत्थेबंदियों के सहयोग से इस से आगे 1920 ई० में गुरद्वारा सुधार लहर के नाम पर अकाली लहर का जन्म हुआ।

सिंघ सभा लहर की देन
(सिखी को नया रूप देने के लिए)

सिंघ सभा लहर के कार्यों को संक्षेप में इन पांच दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है: –

(1) सिख धर्म के स्वतंत्र अस्तित्व व मौलिक स्वरूप की पहचान।

(2) गुरबाणी की कसौटी पर सिख साहित्य की परख।

(3) जीवन शैली, रीतियों व मर्यादा के आडंबरी रूप से बचाव।

(4) विद्वता व युक्ति के बल से अन्यमति धर्मों से छुटकारा।

(5) सिख धर्म के मनोरथों व आशयों को नवीन चेतना व वैज्ञानिक ढंग से प्रचारित करना।

(1) सिख धर्म के स्वतंत्र अस्तित्व व मौलिक स्वरूप की पहचान :

सिख धर्म के मौलिक व स्वतंत्र अस्तित्व की सोच, केवल सिंघ सभियों की देन नहीं जैसे कि आम तौर पर कई बार कह दिया जाता है। यह विचार तत्व, मूल रूप में, गुरू गोबिंद सिंघ जी से भी पहले के प्रमाणित हैं। जब हम विश्लेषणात्मक अध्ययन करते हैं तो इन नये विचार कणों के मौलिक आधार, गुरू नानक देव जी के अनुभवों व सोच में ही ये प्रकट हुए दृष्टिमान होते हैं।

नानक बाणी, सिख धर्म के उन सभी आधारों का मूल है जो एक भिन्न मौलिक व स्वतंत्र धर्म के रूप में बाद में दूसरे गुरू साहिबान ने प्रचारित किये थे। इन का मूल रूप गुरू ग्रंथ साहिब जी के रूप में हमारे पास उपलब्ध है। गुरू ग्रंथ साहिब में गुरू नानक जी का वाक् है:

होरु फकड़ु हिंदु मुसलमाणे (रामकली वार, महला 1, पृष्ठ 952))

पांचवे गुरू, गुरु अर्जुन देव जी का आदेश है :

ना हम हिंदू ना मुसलमान (भैरउ महला 5, पृष्ठ 1136)

क्या भाई देसा सिंघ के रहितनामे का यह वाक्य : ''खालसा हिंदू, मुसलमान ते निआरा रहे।' उपरोक्त वाक्यों की व्याख्या नहीं?

सिंघ सभा लहर के सेवकों ने इस सिद्धांत की व्याख्या जो, 'हम हिंदू नहीं? का नारा लगा कर की, यह कोई बड़ी बात नहीं थी। जैसे कई कहते हैं – यह नारा अंग्रेजों ने सिखों को दिया या सिंघ सभियों, ने इस नई फूट डालने वाली रुचि को उकसाया, सिंघ सभा के सेवकों की भावना खालसा पंथ के उसी न्यारे अस्तित्व के प्रचार वाली थी जिसकी नींव सिखी के आदि काल से रखी जा चुकी थी। इस सिद्धांत पर दशमेश जी के समय तक निश्चित रूप में काफी अमल हो चुका था।

इस बारे में दूसरे भाई गुरदास जी का वाक है :

'तीसर पंथ चलाइओन वड सूर गहेला।

जो लोग महाराजा रणजीत सिंघ के राज –काल के समय की रस्मों रीतियों पर, उसके बाद सिख रइयों के आचार – व्यवहार को सिखी का प्रमाण मान कर सिखी के फिर से परिशोधित रूप की सेवा के कार्यों को सिंघ सभियों की नई खोज या अंग्रेजों की देन व सिंघ सभियों का नई किस्म का प्रचार कहते हैं, वे सिखी के आदि काल से चली हुई विचारधारा जानने का प्रयत्न करें। सिख धर्म, एक स्वतंत्र मौलिक धर्म होने के कारण, सभी श्रेणियों के धर्मो से इस कारण जरूर विलक्षण है कि यह अपना

अस्तित्व रखते हुए अपने सारे साधनों द्वारा सब का भला चाहने वाला धर्म है जिस का आशय व शिक्षा सर्बत के भले वाली है। यथाः

सब को मीतु हम अपना कीना हम सभना के साजन।

सिंघ सभा लहर के सेवकों ने महाराजा रणजीत सिंघ के राज काल तक के समय के प्रभावों की सिखी पर छाई धूमिल दशा और जीवनरस चूस रही ब्राहमणी अमर वेल को घसीट – घसीट कर गले से उतारा । नीचे से सिखी के वृक्ष के मूल रूप में फिर से उगाने का वायुमंडल तैयार किया। इस से पहले 12 मिसलों के समय से ले कर जब खालसा जी का बहुत समय अपनी रहित मर्यादा व समय स्वरुप के विकास की जगह पर अपने अस्तिव की चिन्ता में ही गुजरता था। – महाराजा रणजीत सिंघ के राजकाल के बाद आधी सदी का समय सिखी सिद्धांतों पर ब्राहमणी प्रभावों के वृक्ष की छाया में पीले व मुर्झाए पौधे की भांति है। देखने को चाहे वह काल सिखों के पास राज्यशक्ति होने के कारण एश्वर्य की शिखर ही लगता है, पर वह सिख संगत के विकास, पंथक संगठन व केंद्रीय संगठन का अभाव ही रहा और पंथक गुरमते की विचारधारा के भी तब पैर न लग सके।

सिख राज सत्ता के छिन्न – भिन्न हो जाने का कारण क्या था? अपने मूल से टूट कर डाली से जा लगना । प्रभु, देवनहार से उसकी देन को उत्तम मानना। इसी कारण खालसा दरबार का महल छिन्न – भिन्न हो गया। सिख जब भी मूल को छोड़ कर डाली के साथ लगते रहे हैं, तभी वे अधोगति की ओर अग्रेसर होते रहे हैं।

मूलु छोडि डाली लगे किआ पावहि छाई ॥

यदि उस समय पर पंथक जत्थेबंदी व संगत होती तो यह अधोगति भी किसी तरह से कभी न होती। पर हमने संगठन पंथक जत्थेबंदी व संगत के महत्त्व को कभी कुछ नहीं समझा। जब शक्ति आती है तो सभी कुछ छोड़ कर उस के पीछे दौड़ पड़ते हैं। इस प्रकार मूल आधार को छोड़ कर आगे दौड़ने वालों का पीछा चौड़ होकर ही रहता है।

(2) गुरबाणी की कसौटी पर सिख साहित्य की परख : मध्यकालीन सिख साहित्य को गुरबाणी की रोशनी व उस की कसौटी पर परखने, आंकने की समझ सिंघ सभा लहर के सेवकों व विद्वानों की विशेष देन है। सिख साहित्य, जन्म साखियों, साखी पुस्तकों व बंसावली नामों से, गुर बिलास नानक प्रकाश, नानक विजै, गुरू नानक चंद्रोदय, गुर प्रताप सूर्य आदि वृहत आकारी ग्रंथों का रूप धारण करके प्रकाशित हुआ है तो इन ग्रंथों को लेखकों का दृष्टिकोण, उस समय के ब्राहमणी समाज के प्रभाव को स्वीकार करके पौराणिक बन चुका था। ग्रंथ लेखों द्वारा सिख गुरुओं के जीवन के साथ – साथ इतिहासिक ग्रंथों में पौराणिक कथाओं की भरमार और उन जैसी पौराणिक वार्ताओं की कल्पना करके गुरु साहिब के जीवन चरित्रों को अंकित करना बिल्कुल ही हैरान करने वाली दशा है। कई स्थानों पर ऐसा लगता है जैसे सिखी के सिद्धांत व गुर वाक्य इन महान् विद्वान लेखकों ने पढ़े – विचारे भी नहीं होते हैं।

इन इतिहासिक ग्रंथों ने सिख गुरुओं की गाथा को पौराणिक ढंग से निरुपित करके, जहां इतिहासिक तथ्यों का घालमेल सा बना दिया था वहीं सिख धर्म के विलक्षण अस्तित्व, स्वतंत्र और मौलिक धर्म के महत्त्व के आधार भी संदेहजनक बना दिया। इन ग्रंथों की संतों साधुओं द्वारा सुबह शाम

कथा वार्ता, चाहे साधारण तौर पर जनता के लिए लाभदायक थी पर हंस चोग वृत्ति न होने के कारण यह प्रथा साथ के साथ सिखी पर घातक असर भी करने वाली थी। गुरू साहिबान के विवाह शादियों के समय पर कथित राजसी आडंबर व ठाठ बाठ, ब्राहमणी रीति रिवाजों के अनुसार गुरु परिवारों के संस्कार के लिए भांति – भांति की अतिशयोक्तियां और गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा दुर्गा पूजा का प्रसंग, इतना बढ़ा – चढ़ा कर लिखा मिलता है जैसे दशमेश जी अपने पूवर्जो व खुद नानक पंथ के समर्थक होने की जगह पर किसी अन्य मत के ही धारणकर्ता रहे हो। इतिहास में अंकित किए गए इन भ्रमिक इतिहासिक प्रसंगों को दृष्टि में रख कर सिंघ सभा लहर के सेवकों ने लेखों, भाषणों व पुस्तकों के द्वारा शंकाएं दूर करने का काम आरंभ किया जिन में से अनेकों लेखों व भाषणों के अतिरिक्त भाई दित्त सिंघ जी का दुर्गा प्रबोध ग्रंथ खास करके महत्व पूर्ण है। इसी प्रथा को बाद में जा कर भाई वीर सिंघ जी ने देवी पूजन पड़ताल पुस्तक की रचना करके आगे बढ़ाया। 'गुर प्रताप सूरज' के संपादन पड़ताल के समय भी उन्होंने जो संशोधन से परिपूर्ण अनेक फुट नोट दिए हैं, ये सिंघ सभा के लहर के दृष्टिकोण का ही प्रतिक्रम हैं।

इतिहासिक दृष्टिकोण से प्रो० गुरमुख सिंघ जी ने 'हावज़ाबादी जन्म साखी' – जो अब पुरातन जन्म सखी के नाम से जानी जाती है, के छपने के पहले प्रयत्नों से हस्त लिखित पुस्तकें छापने व संपादित करने का क्रम चलता है तो सरदार कर्म सिंघ की खोजों द्वारा यह काम शिखर पर पहुंचता है जिन की सेवाओं का लाभ उठाने के लिए (सन 1931) खालसा कालेज में इतिहास विभाग कायम किया गया था। इस विभाग की स्थापना सिंघ सभा लहर के खोज़ी प्रभावों का ही फल था।

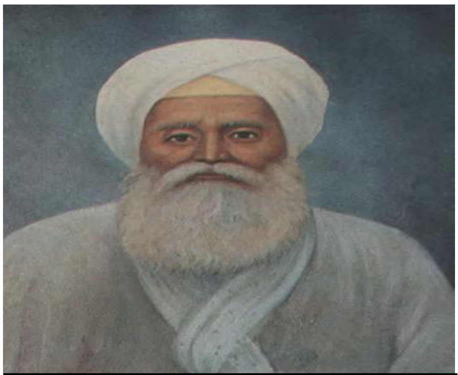
ज्ञानी ज्ञान सिंघ (15 अप्रैल 1822 – 24 सितम्बर 1921) आप जी ने सिक्ख इतिहास खोजकर लिखने में सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। आप की दो बहूमूल्य रचनाएं है तवारीख गुरू खालसा तथा पंथ प्रकाश ।

अपने पुराने इतिहासिक तथ्यों का संशोधन प्रबोधन करने के साथ साथ दूसरे धर्मो के बारे में जानकारी, खास करके पराधर्मो के सिख धर्म पर किये जा रहे हमलों के उत्तर में लिखे ग्रंथ, इस काल के गहरे व तीक्ष्ण प्रकार के तुलनात्मक अध्ययन हैं। इन जैसे सिखी हितैशी भावना वाले प्रयत्न हम आज कहीं ढूंढे भी नहीं पा सकते बड़े ग्रंथों के अतिरिक्त छोटे – छोटे पैंफलेट इस समय भारी संख्या में लिखे व छापे गए जो गंथों की तुलना में हैं तो चाहे छोटे ही थे पर थे ज्ञान के बड़े विषयों के निचोड़। ऐसे ट्रैक्टों के छापने में खालसा ट्रैक्ट सोसायटी अमृतसर की स्थापना और उस का योगदान भी महान् है। पंथ खालसा दीवान भसौड़ ने भी इस मुहिम में बढ़ – चढ़ कर हिस्सा लिया। भाई मोहन सिंघ वैद की सेवा भी वर्णन योग्य है। सिखी के अलग – अलग पहलुओं को निखारने ओर प्रचारित करने वाली सैद्धांतिक पुस्तकों में भाई काहन सिंघ जी द्वारा लिखित गुरमति सुधाकर व गुरमति प्रभाकर का बुनियादी स्थान है। उन के द्वारा लिखी 'हम हिंदू नहीं' पुस्तक इस शोर शराबे में से सिखी को निकालने के लिए शीर्ष क मानी जाती रही है जिस की पृष्ठि में छापे गए तख्तों के हुकमनामों व पंथक संस्थाओं के फैसलों ने सोने पर सुहागे वाला काम किया।

ज्ञानी ज्ञान सिंघ जी ने जितने ग्रंथों की रचना की उन में से कुछ सिंघ सभा लहर के आरंभ होने से पहले के हैं, कुछ प्रारंभिक काल के। जैसे कि हम देखते हैं उन की लेखन शैली पर एकदम सिंघ सभा वाले सुधारक विचारों का प्रबल प्रभाव है और वे बृज भाषा की गूढ़ काव्य शैली को छोड़कर स्पष्ट व सरल वार्ता में लिखने लगे। इतिहासिक दृष्टिकोण को ध्यान में रखने के अतिरिक्त उनका पौराणिक वार्ताओं से बचने के प्रयत्न व चेतना प्रबल तौर पर काम करती हुई कई स्थान पर प्रत्यक्ष दिखलाई देती है। आप के ग्रंथों के जब दूसरे संस्करण छापे गए तो उन्होंने जो संशोधन और फुट नोट दिए और शोध किए, वे सब उठ रही सिंघ सभा लहर के प्रभावों का ही फल था। सत्य तो यह है कि उन की कुछ पुस्तकों की रचना तो हुई ही सिंघ सभा के प्रभाव में थी जिन में से 'खालसा पतित पावन' त्रृपुदमन प्रकाश', गुरधाम दर्शन' 'भुपिंदर आंनद प्रकाश' आदि ग्रंथ वर्णनीय हैं।

मनमत वाले प्रभाव डालने वाली सिख इतिहासिक रचनाओं, गुरबाणी गुरु को कसौटी बना कर परखने व निरीक्षत करने की बोली, सिंघ सभा लहर के सेवक जागृति लाए। इनकी पारखू वृत्ति से दूध का दूध, और पानी का पानी, कच्चेपन का त्याग और सत्य अपनाने की रुचि को तीक्ष्ण किया। इससे पिछला सारा कुछ एक–एक करके अलग किया और नवीन साहित्य रचना इस पक्ष से चेतन्न हो कर की जाने लगी। फलस्वरूप प्राचीन पुस्तकें छपनी शुरु हुई, साथ ही पुराने साहित्य को संपादित करके प्रकाशित करने की प्रथा भी आरंभ हुई।

(3) जीवन शैली, रीतियों व मर्यादा के आडंबरी रूप से बचाव : जीवन शैली व मर्यादा किसी भी धर्म की आंतरिक रूह का बाहयमुखी प्रस्तुतीकरण होती हैं। सिख गुरू साहिबान ने कर्मकांडीय आंडबर व बेकार के झंजटों से रहित,जो 'गुरमुखता का गाडी राह' चलाया था, उस के प्रमाणिक और सैद्धांतिक ग्रंथों, रहतनामों व इतिहासिक ग्रंथों के प्रसंगों व साखियों के रूप में मिलती हैं।

छटे पातिशाह, गुरू हरिगोबिंद साहिब का समकालीन इतिहासकार मोहसन फानी पुस्तक दाबिस्तान मज़ाहिब का लेखक लिखता है– "नानक पंथी सिख हिंदुओं के तीर्थो पर देवी देवताओं को नहीं पूजते । सिख, संस्कृत को देव भाषा भी नहीं मानते। "

पर हम देखते हैं कि नानकपंथियों की इस धारणा और विरोध के बावजूद गुरु गोबिंद सिंघ जी के युग पवर्तक कारनामों और बाणी के अमोघ बाणों के होते हुए ज्यों ही सिखों में बारह मिसलों के पीछे राज काज व एशवर्य ने पैर पसारे, ब्राहमणी धर्म बाढ़ के पानी की भांति सिखी की बाड़ पर छा गया। महाराजा रणजीत सिंघ जी के राजकाल में ब्राहमणवाद धर्म और डोगराशाही को अधिक महत्व मिला। सिखी की रस्में रीतियां व मर्यादा ब्राहमणवाद की नकल बनते–बनते धीरे–धीरे उसके असली रूप की धारणकर्ता बन गई थीं।

महाराजा रणजीत सिंघ जी ने अपने व परिवार कि जितने भी विवाह किए, वे वैदिक रीति के अनुसार ब्राहमणी या राज्य पंडितों द्वारा सम –फेरों के रूप में ही कराए जाते रहे। महाराजा साहिब के पोते, कंवर नौनिहाल सिंघ की शादी के समय महाराजा रणजीत सिंघ का सिख दरबार, एश्वर्य की चोटी पर था। इस शादी के शाही ठाठ–बाठ वाले हालात का वर्णन करते हुए इतिहासकारों ने बहुत बड़े गौरव से लिखा है, "पहली आधी रात के बाद एक बजे फेरे हुए" याद रहे यह विवाह अटारी वाले सिख सरदारों की लड़की के संग हुआ था किसी हिंदू राजपूत की लड़की के साथ नहीं कि लड़की वालो की मर्जी के विरुद्ध महाराजा साहिब ने दखल देना ठीक न समझा हो।

अनंद कारज की रस्म, जिस के बारे में छटे गुरु हरि गोबिंद साहिब जी द्वारा गांव झबाल में अपनी बेटी, बीबी वीरो का अनंद कारज करते समय इतिहास से प्रमाण मिलते हैं, सिंघ सभा लहर से पहले के समय यह एकदम अनोखी बात हो गई थी।

रावलपिंडी की सहजधारी सिखों की निरंकारी लहर के अग्रणी बाबा दयाल व रता जी ने अपने सेवकों में अनंद विवाह की लहर पुनः जारी की तो उनको सिखों का करड़ा विरोध झेलना पड़ा। बाबा राम सिंघ जी (नामधारी) ने इस रीति को आगे बढ़ाया तो कुछ हिंदू ढंग से बेदी गाड़ कर मंत्रों की जगह पर गुरु ग्रंथ साहिब में से लावां पढ़ी जाने लगीं। इस संधि काल की यह याद, नामधारी अब तक आर्युवैदिक फेरों के रूप में चलाए आ रहे हैं।

गुरू महाराज की हजूरी में आनंद कारज करने की रीति सिंघ सभा लहर के सेवकों के फेरों की जगह पर परिक्रमा करके विशेष तौर पर चलाई तो ब्राहमणों द्वारा कड़ा विरोध भी किया गया और कई प्रकार के मखौल व व्यंग भी अनंद रीति के विरुद्ध जोड़ कर प्रचारित किए गए। यह कहा जाता था कि इस तरह तो सिख लड़की का विवाह महाराज, गुरु ग्रंथ साहिब या ताबिया बैठे ग्रंथी के साथ ही कर देते हैं। अदालतों में मुकदमें खड़े करके कई अनंद विवाह को हिंदू रीति व विधान के विरुद्ध होने के फतवे लगाए गए। यहां तक कि भाई जवाहर सिंघ के आनंद विवाह से पैदा हुए लड़के को अदालत में से हरामी होने का फतवा दिलवाया गया कि वह लड़का अपने बाप की जायदाद का हकदार नहीं माना जा सकता जिस के कारण सिखों के लिए अनंद मैरिज एक्ट व्यवहार में लाना जरुरी हुआ। इसके पास होने से हिन्दू विरासत एक्ट से सिखों का संबंध तो उस समय ही खत्म हो गया था पर अब आज़ादी के बाद पता नहीं फिर कैसे जुड़ गया है और हिंदू विरासत एक्ट फिर गले मढ़ दिया गया।

यह एक्ट, वायसराए की कौंसल के मैंबर होने की हैसीयत में पहले महाराजा ऋपुदमन सिंघ नाभा ने पेश किया व बाद में जा कर इस कौंसल की उपरोक्त पद पर बिराज कर, सरदार सुंदर सिंघ मजीठा ने 22 अक्तूबर 1909 को इसे पास करवाया। चाहे कानूनी तौर पर अनंद मैरिज एक्ट के अस्तित्व में आने के बाद अदालती कठिनाइयां कम हो गई थीं, सिख विरासत व रीतियां, हिंदुओं से अलग हो गई थीं पर सामाजिक तौर पर ब्राहमणों द्वारा जो-जो विरोध हुआ और अनंद कारज की रीति प्रचलित होने की राह में हर स्थान पर कई अवरोध खड़े किये जाते रहे, उन अवरोधों व कठिनाइयों को आज हम अनुभव भी नहीं कर सकते जबकि इस रीति के लोकप्रिय होने के कारण अब पंजाब के ब्राहमणों के घरों से लेकर कम्युनिस्टों तक के परिवारों में भी आम तौर पर आनंद कारज किया व करवाया जाता है।

इस रीति को पुन : प्रचलित करके इसे लोकप्रिय स्थिति में पहुंचाना सिंघ सभा लहर के पंथक सेवकों के निरंतर संघर्ष का ही फल है।

स्त्री का स्थान व सती प्रथा : सिख गुरु साहिबान ने स्त्री का दर्जा ऊंचा उठाने के लिए सती की रस्म का कड़ा विरोध किया था:

सतीआ ऐहि न आखीअनि जो मड़िआ लगि जलंनि ।।

नानक सतीआ जाणीअनि् जि बिरहे चोट मरंनि ।। (पृष्ठ 787)

परन्तु हम अपने इतिहास में खालसा दरबार के महाराजा रणजीत सिंघ शेरे पंजाब के देहावसान, उनके सुपुत्र महाराजा खड़क सिंघ जी की चंदन की चिखा में सती होने वाली महारानियों की एक लंबी

सूची को पढ़ते हैं। मृतक रस्मे, पितृपूजा, पिंड भरवाने, पहोए या गया में जा कर मृतक की गति करवाना, गंगा में फूल डालना, ये रीतियां सिखों में पूरी तरह घर कर चुकी थीं। इन रीतियों के विरुद्ध जब बाबा दयाल व रत्ता जी ने रावलपिंडी में जेहाद किया तो उनकी मृत्यु के पश्चात रोना – धोना, किरिया कर्म बंद करने की गुरमति को समझाया तो उनको भाईचारे ने यह कहकर छेद दिया कि कैसे माणस (सिख) हुए जो मरों के बाद भी कढ़ाह कर के बांटते हैं।

लड़की को मार देने की 'कुड़ीमार प्रथा' का उस समय आम प्रचलन था। यह रोग सिखों में भी अधिकांश घर कर गया था। पंजाब में कहावत मशहूर थी कि घरानों में पैदा होते ही लड़की को घड़े में डाल कर, रुई की पूणियां डाल कर इस लोकमंत्र का जाप करके दबा दिया जाता था: 'गुड़ खाई पूणी कत्तीं। आप ना आई वीर नूं घत्तीं'।

ऐसी स्थिति में जब महाराजा रणजीत सिंघ की माता जी को भूमि समाधि दी जा चुकी थी, बडरुखिआ सरदारों के गांव में आगे से बागड़ियां कुल महापुरख बाबा गुदड़ सिंघ जी निकले तो उन्होंने अपने इस पुराने सेवक घराने का जल पानी सेवन करने से इनकार कर दिया। पूछने पर कहा – हम कुड़ीमार के घर का नहीं खाते और आप कुड़ी मार हो। साथ ही उनको अपनी दिव्य – दृष्टि से बताया कि बच्ची अभी जिंदा है निकाल लाओ। इससे पंजाब का बली पुरख पैदा होगा। जिस के फलस्वरूप दबी हुई बच्ची को निकाला गया जो बड़ी हुई। सरदार महां सिंघ के साथ उसका विवाह हुआ और फिर वही बच्ची महाराजा रणजीत सिंघ जी शेरे पंजाब की जननी बनी।

यह लड़की मारने के रीति सिंघ सभा के जमाने तक कितनी प्रचलित थी कि इस का प्रमाण एक उस समय की लिखी 'पंजाब की सैर' पुस्तक में से मिलता है। अंग्रेजी सरकार ने, जब लड़की मारने वालों को सजा का भागी बनाने का प्रस्ताव सारे मजहबों, मुखियों व रइसों के सम्मिलन में रखा तो इस में सब से अधिक बेदर्दी से गुरू कुल के शहजादे ही उभर कर सामने आए जिन्होंने बाद में कानूनी डंडे के डर से सती प्रथा व लड़कियों को मारने की कुड़ीमार प्रथा से परहेज करना स्वीकार कर लिया था।

सिंघ सभा लहर के सेवकों ने इन रीतियों के विरुद्ध गुरु वचनों को प्रमाण मान कर 'सो किउ मंदा आखीऐ जितु जनमहि राजानु' । स्त्री के दर्जे को पुरुष के बराबर जानकर इस सिद्धांत को व्यवहारिक प्रयत्नों के प्रचारित किया और हर क्षेत्र में स्त्री को पुरुषों के बराबर दर्जे पर खड़ा कर दिया। उस समय महिलाओं को अमृतपान करने की अधिकारिणी नहीं माना जाता था। यदि कोई बहुत ही रियायत करे – जैसे कई सिख संप्रदाओं के बड़े गुरधामें – हजूर साहिब आदि में इस समय भी किया जाता है – तो एक सिंघ पांच पउड़ियां जपुजी साहिब की पढ़ कर, आंखों पर छींटे मार कर रस्म पूरी कर देता था। बाबा राम सिंघ जी ने स्त्रियों को अमृतपान करवाना आरंभ किया तो उनको 'तीवियां नूं कच्छा पुआण वाला' कह कर अकाल बुंगे के पुजारियों द्वारा तृस्कृत किया गया। बड़ी लंबी खोज विचार व बहस के बाद सिंघ सभा के सेवकों ने यह भ्रम जाल काट कर राह समतल की। बाद में संत गुरबख्श सिंघ जी पटियाला वालों की एक युक्ति के बल पर स्त्री को अमृतधारी होने की रीति निश्चित करवाई गई थी। युक्ति यह थी कि हर प्राणी का अपनी – अपनी करनी पर निबेड़ा है, यानी जो जैसा करेगा, वैसा भरेगा। सिखी में नाम का जाप करना ही मुक्ति का साधन माना गया है। नाम की प्राप्ति पांच प्यारों से होती है जो अमृतपान करने की रीति से संबंध रखती है। इसलिए स्त्री को पुरुषों की तरह ही अमृतपान करवा कर नाम प्राप्त करके मुक्ति प्राप्त करने का अधिकार है। जो स्त्री अमृतपान नहीं करती, वह नाम कैसे और कहां से प्राप्त करेगी ?

इस अधिकार को सिंघ सभा के सेवकों ने बल दे कर प्रचलित किया। यहां तक कि पंच खालसा दीवान भसौड़ ने स्त्रियों से सिरों पर दस्तर सजाना भी जरुरी करार कर दिया जो सेंट्रल माझा दीवान, स्वतंत्र जत्था गुरदासपुर और भाई साहिब भाई रणधीर सिंघ जी के जत्थे के सिंघ इस रीति को अब तक निभा रहे हैं।

गुरु नानक देव जी ने यज्ञोपवीत या जनेऊ का करड़ा विरोध किया था। जैसे कि हम नित्य प्रति पढ़ते हैं :

एह जनेऊ जीअ का हई त पांडे घति ।। (आसा दी वार पृष्ठ 471)

पर क्या यह हैरानी की बात नहीं थी कि उसी बेदी कुल के रत्न, सिखी का प्रचार करने वाले, पहली सिंघ सभा के मुखी, सर बाबा खेम सिंघ जी, जनेऊ के धारणकर्ता थे, जिस के कारण उनको हिंदुओं का मुखी समझ कर हिंदुओं के कान्फ्रेंसों की प्रधानगी करने का कर्त्तव्य भी पूरा करना पड़ता था और सिखों के विरोध की उन्हें बिल्कुल प्रवाह नहीं थी।

सिखी में व्यक्ति पूजा, गुरू गोबिंद सिंघ जी के बाद किसी व्यक्ति का ग्यारहवां गुरु कहलवाना या मानना, विवर्जित कर दिया गया था। क्योंकि गुरु गोबिद सिंघ जी गुरिआई स्वयं गुरु ग्रंथ साहिब जी को दे कर खालसा पंथ को शबद के अधीन कर गए थे। पर सिंघ सभा लहर उठने के समय एक नहीं, कई स्थान पर बारहवें गुरू बने हुए थे। सोढी, बेदी तो पैदा होते ही बाबे साहिबजादे कहे जाते थे। विशेष कर बाबा साहिब सिंघ जी बेदी। उनकी वंश, खास कर बाबा खेम सिंघ जी को ग्यारहवां गुरु कह कर प्रचारित करते और आप भी आगे से गुरु बन कर चवर झुलवाते, पूजा करवाते वे खंडे का अमृत छकाने की जगह पर चरण पहुल दिया करते थे।

बाबा राम सिंघ जी, जो सिंघ सभा लहर के आरंभ के समय नजरबंद किये जा चुके थे, उन के सेवक भी उनको ग्यारहवां गुरू प्रसिद्ध करके उन की आगे चल रही गुरिआई का प्रचार कर रहे थे। इसी प्रकार बंदई सिखों ने बाबा बंदा सिंघ जी को, और अजीत मलिए, बाबा अजीत सिंघ और हठी सिंघ बुरहानपुर वालों की गुरु के नाम से प्रचारित करते व पूजते थे। सिंघ सभा लहर के सेवकों ने गुरु ग्रंथ के अतिरिक्त बाकी गुरुओं को दंभी ठहराया और गुरशबद द्वारा सिखी का सीधा रिश्ता जोड़ा, चाहे इस सिलसिले में बाबा खेम सिंघ जी जैसे प्रभावशाली व्यक्तियों और उनके कारण उन्हें सरकार का गुस्सा भी झेलना पड़ा। बाबा खेम सिंघ जी की गद्दी का गद्देला, कैसे सिखों ने अकाल तख्त से सरोवर में उठा मारा और बात मुकदमों तक पहुँची, यह एक लंबी वार्ता है। परिणाम यह हुआ कि सिंघ सभा लहर ने दंभी व देहधारी गुरुओं का करड़ा विरोध किया और सिखों को ऐसा करने के लिए स्वस्थ अगवाई प्रधान की।

सिखी और श्राद्ध : श्राद्धों की सिखी में मनाही है। 'जीवत पितर न मानै कोउ मूएं सराध कराई' पर सिंघ सभा लहर से पूर्व दूसरों की तो बात ही छोड़ो, गुरू साहिबान खास करके गुरु नानक देव जी का श्राद्ध करने की पवित्र व आम प्रचलित रस्म बन गई थी। सिंघ सभा लहर के सेवकों ने श्राद्धों की बीमारी को सिखों में से दूर किया। अब फिर अमृतसर, डेरा बाबा नानक आदि कई स्थानों पर गुरू नानक देव जी का श्राद्ध करने वाली कुरीति पुनर्जीवित हो गई है। गुरू नानक देव जी ने आरती पूजा का खंडन – 'गगन मैं थालु रवि चंद दीपक बने' शब्द का उच्चारण करके किया था, पर सिख धर्म मंदिरों में इस शब्द को उल्टे आरती करने का प्रमाण मान कर, हिंदू मंदिरों का भांति मूर्तियां रख का आरतियां करना प्रचलित हो गया था। भाई दित्त सिंघ जी ने आरती प्रबोध लिख कर वास्तविकता को प्रकट किया

तो उन पुजारियों द्वारा इसे रविदासिए दित्त सिंघ दी नीच काढ़ कह कर इसका निंदा प्रचार किया गया।

पुजारियों के दृष्टिकोण के बारे में एक रुचिकर बात वर्णनयोग्य है। 'अनंद मैरिज एक्ट' की जदो-जहिद के समय टिक्का ऋपुदमन सिंघ नाभा ने तख्त साहिबान से राय प्राप्त करने के लिए अपने अहिलकार भेजे। सरदार गुरदयाल सिंघ जी नाभा, पटना साहिब गए और कढ़ाह प्रशाद ले कर अरदास के लिए उपस्थित हुए। पुजारी ने पूछा – 'सरदार साहिब, आप रहिरास बताओ कौन सी पढ़ते हो? सिंघ सभियों वाली वा सनातनी सिखों वाली? सरदार जी ने कहा – 'कोई भी नहीं।' उन्होंने अपनी ओर से सत्य ही कहा था। यदि पुजारी ठीक बात करता तो सरदार गुरदयाल सिंघ को कह सकता था कि तेरी अरदास बिल्कुल स्वीकार नहीं हो सकती पर आगे से पुजारी साहिब ने संपूर्ण प्रसन्नता से कहा – तब आपकी अरदास यहां पर हो सकती है। ताप्तर्य यह कि सिंघ सभियों की अरदास यहां पर नहीं हो सकती परन्तु जो व्यक्ति कुछ भी न पढ़े उनकों सिंघ सभियों से भी उत्तम समझा जाता था।

सिंघ सभियों को उस समय पुजारी लोग, हरिमंदर साहिब में भी प्रवेश नहीं करने देते थे। बाबू तेजा सिंघ, भाई रणधीर सिंघ, हैड मास्टर नरैण सिंघ जी को – 'तुसीं तां चूहड़सभिए हो, तुहाडी अरदास नहीं हो सकदी।' इस बोल से हरिमंदर साहिब से तृस्कार कर बाहर निकाल दिया गया था। यह घटना उस समय के अखबारों में भी छपी मिलती है, जो इस प्रकार है:

'भाई तेजा सिंघ जी ओ सी पटियाला व सचिव पंच खंड और सरदार नरैण सिंघ बी० ए०, हैड मास्टर खालसा हाई स्कूल लुधियाना, भाई रणधीर सिंघ जी व अन्य सज्जन 28 तारीख को 3 बजे दुपैहर दरबार साहिब जी गए। उनको मज़हबी कह कर अंदर से निकाल दिया गया। पर ये शरीफ सिंघ शांति पूर्वक बाहर बिराजमन रहे। शाम को सिंघ जी सरबराह साहिब को मिल कर डिप्टी कमिश्नर के पास चले थे कि दरबार साहिब के एक मुंशी साहिब जी सम्मान पूर्वक उनको वापिस अंदर ले गए और अरदास करवा दी।'

(खालसा समाचार 2 दिसंबर 1910)

सिंघ सभा ने सिखी के इस पहलू से कितनी कुछ सेवा की और कौम की नुहार किस-किस क्षेत्र में कितनी बदली, इस का पूरा विवरण बृहत आकार का है। पर कुछ पहलू अछूते रखना उचित न होगा। जात-पात, छूत-छात के विरोध में सिंघ सभा लहर के सेवकों ने उस समय जिस तरह से पूरे ताण से, जान मार कर भारी कुर्बानी से सेवा आरंभ की थी, उस का अछूतों के सुधार और दूसरे धर्मों में से सिख बनने वालों के साथ मेल-जोल एक बड़ी कठिन मंजिल थी जिसे सिंघ सभा लहर के सेवको ने मुसीबतें झेल कर प्राप्त किया। भाई साहिब रणधीर सिंघ जी का (1903) में मौलवी करीम बख्श के साथ अमृतपान करना जो बाद में संत लखबीर सिंघ जी प्रसिद्ध हुए, एक इतिहासिक घटना है। ये कारनामे किसी क्रांतिकारी कदम से कम नहीं थे। अपनी बहु बेटियों के रिश्ते गैर-जाति के लोगों के साथ ऐलान करके करने आरंभ कर दिये थे। ये सिख अधिकांश पंच खालसा दीवान के सदस्यों में से थे जिन्होंने इन में कई उच्च जातीय सिखों की बीवियां अछूतों, जुलाओं आदि की श्रेणियों में से सजे सिंघों के साथ उनके विवाह हुए थे।

(4) विद्वता व युक्ति के बल से ब्राहमणी धर्म से छुटकारा : सिंघ सभा लहर के सेवकों ने जब सिखी के आंगन में पराधर्मी, खास करके ब्राह्मणी धर्म के बिखरे कूड़ा-करकट को साफ करने का बीड़ा उठाया तब वह समय अपने विरोधियों को शस्त्रों से नहीं, शास्त्रों से सीधे रास्ते पर लाने का

था। इस वाक्‌युद्ध के समय पर आवश्यक हथियार थे – तर्क, विद्या और युक्ति और इन हथियारों को ठीक तरह से चलाने वाली चेतन व प्रबल बुद्धि की आवश्यकता थी। बुद्धि के बल को परत चढ़ाने व सब्र रखने के लिए भी जमाने जितनी विद्वता की आवश्यकता थी। वह उस समय के सिखों ने पैदा कर ली थी। भाई दित्त सिंघ जी के पंडित दयानंद के संग हुए शास्त्रार्थ 'मेरा ते साधू दयानंद का संवाद' पुस्तक को जिस ने पढ़ा, और उनकी दूसरी पुस्तक 'दंभ विदारन' पर जिस ने दृष्टि डाली है वह सहज ही अंदाजा लगा सकता है कि सिंघ सभा लहर का यह 'बोधक – स्तंभ' कितना रोशन और कैसे – कैसे अद्वितीय गुणों का भंडार था। पुराने ब्राहमण धर्म ग्रंथों के साथ – साथ इन पंथ सेवकों को नवीन पश्चिमी ज्ञान पर भी विशेष अधिकार प्राप्त था और दूसरे धर्मो के बारे में भी भरपूर ज्ञान वे रखते थे। उस काल की रचनाओं से यह स्पष्ट रूप में पता चलता है कि भाई मइया सिंघ जैसे पंजाबी – अंग्रेजी की डिक्शनरी इस समय कोई एक व्यक्ति तो नहीं, कोई विभाग भले ही रचने में समर्थ हो।

प्रो० गुरमुख सिंघ जी, जो सिंघ सभा लहर के जान प्राण थे, जहां पूर्वी व पश्चिमी विद्या के उच्च स्तर के विद्वान थे, वहीं उन की काम करने की शक्ति और लगन, विद्वता से भी दुगुनी – चौगुनी थी। सिंघ सभा लहर के इन प्रारंभिक सेवकों के साथ – साथ, जिन दूसरे विद्वानों की विद्वता उस समय सिखों में विशेष स्थान रखती थी, उन विद्वानों की तस्वीरें मैकालिफ साहिब ने अपने ग्रंथ – सिख रिलीजन के आरंभ में छाप कर उनके प्रति प्राप्ति के लिए विशेष धन्यवाद किया है। इन विद्वान रत्नों के नाम सिंघ सभा लहर के सेवकों में आ जाते हैं। भाई दित्त सिंघ जी, ज्ञानी हजारा सिंघ, ज्ञानी सरदूल सिंघ आदि विद्वानों के अतिरिक्त जिन को मैकालिफ साहिब ने एक ग्रंथ दे कर कृतार्थ करते हुए स्थाई अधिकार भेंट किए, वे थे भाई काहन सिंघ जी नाभा, जिन की रचना महान्‌कोश, जो उनकी विद्वता व सेवा की मुंह बोलती तसवीर है , सदा के लिए अमर रचना मानी जाएगी।

चाहे शास्त्रार्थ व बहस मुहासों के इस समय में भाई दित्त सिंघ जी का स्थान सर्वोत्तम था पर दूसरे विद्वानों ने भी बाद में अपने – अपने क्षेत्र में वर्णन योग्य सेवाएं की थीं। पंडित गुरबख्श सिंघ जी, पटियाला वालो ने भाई दित्त सिंघ जी ने अपनी भाषण शैली और भाई वीर सिंघ ने कथा व व्याख्यानों के द्वारा सिखो के दीवानों व समारोहों में बुद्धिबल को बलवान करके जनसमूह को प्रभावित किया है। जैसे आजकल साधारण व कम पढ़े हुए कम्युनिस्टों में भी बहस में अपना पक्ष प्रकट करने की प्रबल शक्ति को हम देखते हैं, उस समयके बुद्धिमान प्रचारकों के बल पर साधारण सिख तर्कबाज और विचारचर्चा के लिए अपने आप के तैयार रखता था ताकि सिखी के विरुद्ध किय जा रहे आक्रमणों का तुरंत – फुरंत उत्तर दे कर अपने धर्म के गौरव को मनवा सकें। पंच खालसा दीवान के मैंबर जो बाद में जा कर कुछ अधिक ही आगे निकल गए थे, इस क्षेत्र में विशेष तीखे व जोशीले थे। इस तरह विद्वता व युक्ति से सिंघ सभा लहर के सेवकों ने ब्राहमणी सिखी को धर्म से बचाने व निराला स्वरूप निखारने के सार्थक और प्रबल प्रयत्न पूर्णतः निभाए।

(5) सिख धर्म के मनोरथों व आशयों को नवीन चेतना व वैज्ञानिक ढंग से प्रचारित करना : सिंघ सभा लहर का ज़माना पश्चिमी विद्या के प्रवेश का था। साथ ही हिंदू वैदिक धर्म आर्य समाज के रूप में नवीन जागृति की अंगड़ाई ले कर उठा था। ब्रह्मा समाजी, आर्य समाजी लहरों की नींव पड़ चुकी थी। पश्चिमी विद्या के स्रोत स्कूलों कालेजों के रूप में खुल चुके थे व और भी खुल रहे थे। सिंघ सभा लहर के सेवकों ने उस समय की सारी विद्या प्राप्त करने की युक्तियां अर्जित कर ली थीं। भविष्य के

सिखी के वारिसों के लिए स्कूल व कालेज भी खोलने आरंभ कर दिए थे जिन में खालसा कालेज अमृतसर एक महान संस्था अस्तित्व में आई और शैक्षणिक कान्फ्रेस के अस्तित्व में आने से विद्या प्रसार की बेल खिल उठी। कई अखबारें, अंग्रेजी, उर्दू व पंजाबी में निकाली जाने लगीं, जिन से अपनी बात हर सप्ताह पाठकों तक पहुंचने का साधन उजागर हुआ और एक – दूसरे की संगत से ज्ञान चर्चा व संवाद व संपर्क बढ़ना आरंभ हुआ।

प्रचार के लिए इस प्रकार व्याख्यान और लेख पुस्तकों के लेखन की शैली को बदल दिया गया। पहले बृज भाषा या साध भाषा वाले 'आण कर के' स्थान पर सीधी स्पष्ट बात करके, अपनी बात मीठे, मृदुल व सुरीले व विनोदी ढंग से कही जाने लगी। इससे नवीन किसम के लोकप्रिय पंजाबी साहित्य की नींव पड़ी। इस सामाजिक चेतना ने सुधार के अंश इतने बढ़ाए कि थोड़ी देर के बाद ही सिंघ सभा लहर का सुधारवादी तत्व गुरद्वारा सुधार लहर के रूप में बदल गया जिस ने गुरद्वारा रकाब गंज के मसले से ले कर ननकाणा साहिब, पंजा साहिब व गुरु के बाग की कुर्बानियों के साथ सिख इतिहास दोहराया और सिखी के लिए जीते जागते धर्म का दुनियां का अहसास करवाया।

क्या हैरानी नहीं कि जिन मुद्दों के बारे में पहले चर्चा की गई है, जो सुधार सिंघ सभा लहर ने आरंभ किए थे, वे मसले फिर इस समय किसी न किसी रूप में उभर कर सामने आ खड़े हुए हैं। कहीं जय माला डाली जा रही हैं, कहीं आरतियां उतारी जा रही हैं और आडंबरी कारनामे तो हर जगह पर ही पैर पसारे बढ़ते चले जा रहे हैं। सिंघ सभा की शताब्दी मनाते हुए ब्राह्मणी धर्म करने वाली नीति से बचने के लिए नास्तिक व नवीन फैशन अधोगति के औझड़ की राह से गुरमति मार्ग की ओर वापिस आने के लिए आज जितने भी प्रयत्नों की आवश्यकता है ओर जो कुछ करना चाहिए वह कई नवीन समस्याएं हमारे सामने हैं, जिन की खातिर जूझने के लिए उन सारे तरीकों व साधनों की भी जरूरत है, जिनका सिंघ सभा लहर के सेवकों ने प्रयोग किया था । बल्कि बहुत सी उठी नवीन समस्याओं के लिए उस से अधिक शक्ति व संगठित पंथक सेवा व बुद्धि बल बढ़ाने व प्रयोग करने की ललकार हमें आज पुकार रही है। यह जमाना देखेगा और बताएगा कि हम उस ललकार को स्वीकार करने के लिए क्या कर रहे हैं जो कुछ हमें साधन व शक्ति के होते करना चाहिए था, वह क्यों न कर सके। पंथ के प्रति एक सिख की जो जिम्मेवरी है, क्या हम पूरी करते हैं, अपने कर्तव्य के प्रति कोई रुचि रखते हैं या फिर पंथ के नाम और शोभा से लाभ उठाना ही हमने अपना धर्म समझा हुआ है? यह बात इस समय सोचनें, विचारने व कुछ करने से संबंध रखती है।

लगभग ढाई दशक पूर्व सिंघ सभा की शताब्दी मनाई गई। बात शताब्दी मनाने से समाप्त नहीं हो जाती, बल्कि शुरू होती है जो नयी मंजिल के लिए संगठन, शक्ति, सेवा, ईमान बुद्धि बल व अन्य सारे साधनों की मांग करती है।

आओ, जितना कुछ योगदान पंथ सेवा के कुंभ की आहुति में डालकर हम दे सकते हैं, वह योगदान देकर अपने कर्तव्यों का पालन करें।

R R R R R R R R

पुनर – जाग्रण और मूर्ति पूजा निषेध

सिंघ सभा लहर (गुरुद्वारा सुधार लहर) जब सिखर पर थी तब सिख लोगों के शिक्षित वर्ग ने अनुभव किया कि हम गुरु आशय के अनुकुल कार्य नहीं करते की जब कि हमें श्री गुरू ग्रंथ साहब की वाणी मूर्ति पूजा तथा जाति – पाति के चक्रव्यू को त्यागने के लिए बार – बार आदेश देती है तो भी हम लोग उस पर आचर्ण क्यों नहीं करते। यह प्रश्न बहुत तर्क संगत था क्यों कि गुरूवाणी की पंक्तियों पर जीवन व्यापन करना ही सिक्खी धारण करनी मानी जाती है। उन दिनों सभी विद्वानों ने महिसूस किया यदि श्री दरबार साहिब (हरिमन्दिर) की परिक्रमा में ही मूर्तियां पूजन होगा तो गुरू वाणी का पठन तो वैसी ही हुआ जैसे तोता मानव भाषा सीख कर बोलता तो है परन्तु उसको न अर्थो का बोध होता है न अपनी बात बोली हुई पर व्यवहार कर सकता है। बस हम भी सब तोते की तरह जीवन भर वाणी पढ़ते रहते हैं परन्तु उसके भावार्थो पर आचरण नहीं करते ।

इस तर्क संगत बात को लेकर एक सभा का आयोजन किया गया और निर्णय लिया गया कि सर्व प्रथम समाज में जागृति लाने कि लिए किसी विद्वान द्वारा एक पुस्तक लिखी जाये जो समस्त मानव समाज के समक्ष सिक्खों के न्यारे सिद्धांत एवं न्यारे स्वरूप की व्याख्या किसी विशेष युक्ति तथा तर्क संगत उदाहरणों – से करे ताकि जब हम दरबार साहिब की परिक्रमा से मूर्तियां हटाने का कार्य करे तो अपने लोग ही हमारा विरोध न करें क्यों कि जन – साधारण को गुरुमति का ज्ञान नहीं के बराबर है। यदि हम यह प्रयास नहीं करते तो बात बिल्कुल वैसी ही होगी। जैसे – 'काबे से कुफर' का प्रसार किया जा रहा हो।

तब सब की दृष्टि भाई काहन सिंघ नाभा जी पर गई उन दिनों वह पंथ में बुद्धि जीवियों में गिने जाते थे। उन्होंने यह कार्य बहुत कड़े प्रयास के पश्चात कर दिखाया। उन द्वारा रचित एक विशेष पुस्तक जिस का नाम उन्होनें 'हम हिन्दू नहीं' रखा प्रकाशित की गई, जिस में सिक्खों के न्यारें सिद्धांत तथा न्यारे स्वरूप की गुरुवाणी द्वारा रूप रेखा खीची गई थी। इस पुस्तक को पढ़ाने के पश्चात विरोधी लोगों के मुख पर ताले जड़े गये उनके के पास अब कुछ कहने को बचा ही नहीं था। फिर भी शराती पक्ष ने बहुत विवाद उठाया परन्तु वे कुछ कर नहीं पाये क्योंकि उनके पास कोई अधार नहीं था। यह शुभ कार्य सन् 1905 ई. में श्री दरबार साहिब के मैनेजर (सरबगाह) सरदार अरुड़ सिंघ के हाथों तत्व खालसा ने कर दिखाया ।

इस प्रकार सिक्ख परम्परा का मूल भूत सिद्धांत एक ईश्वर वाद लागू कर दिया गया जिस से सनातनी मतावलम्बी बहुत क्रोधित हुए इस कारण उन से नाता स्वयं ही तूट गया।

इस बात को ध्यान में रखते हुए उन्हीं दिनों अफगानिस्तान के बादशाह अब्दुल रहिमान ने एक विशेष निर्णय में आदेश जारी किया कि सिक्ख धार्मिक स्थानों पर मूर्तियां स्थापित नहीं जी जा सकती क्योंकि सिक्ख केवल एक ईश्वर वाद में विश्वास रखते हैं। इस प्रकार उसने सिक्खों को हिन्दूओं से अलग मान्यता प्रदान कर दी। किन्तु आश्चर्य की बात यह थी कि कुछ ऐसे सिक्ख जो केवल स्वरूप से सिख दिखाई दे रहे थे परन्तु विचार धारा से ब्राहमणी साम्प्रदाय के थे ने जन – साधारण में अपने दूषित प्रचार से बहुत उत्तेजना उत्पन कर दी। उन्होंने आरोप लगाया कि यह कार्य अंग्रेज़ों द्वारा बांटों और राज्य करों का एक भाग है। कुछ एक कहने लगे इस प्रकार हम से सहजधारी लोग दूर हो जायेगें। इस प्रकार सिक्ख संख्या की दृष्टि से कमजोर हो जायेगें। यहां तक कि कुछ एक ग्रंथी (पूजारियों) ने भी कहा कि इस प्रकार दर्शनार्थियों की संख्या कम होने से गुरुघर की आय भी कम हो जायेगी इत्यादि। परन्तु समाचार पत्र – खालसा ऐडवोकेट, खालसा समाचार, खालसा सेवक तथा पंजाब इत्यादि ने तत्व खलसा की विचार धारा का बहुत समर्थन किया।